आर्यभट

गुणाकर मुले

आर्यभट

प्राचीन भारत के महान गणितज्ञ-ज्योतिषी

गुणाकर मुले

ज्ञान-विज्ञान प्रकाशन

नई दिल्ली

मूल्य
रु 65.00

●

●

पहला संस्करण . 1991
दूसरा संस्करण 1995
तीसरी आवृत्ति 2001

●

प्रकाशक : ज्ञान-विज्ञान प्रकाशन
1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग
नई दिल्ली-110 002

●

मुद्रक बी के ऑफसेट
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110 032

●

आवरणचित्र
नरेन्द्र श्रीवास्तव

दो शब्द

आर्यभट (499 ई.) के साथ भारत में गणित और ज्योतिष के अध्ययन का एक नया युग शुरू हुआ था, वैज्ञानिक चिंतन की एक नई स्वस्थ परंपरा स्थापित हुई थी। साथ ही, आर्यभट प्राचीन भारत के पहले वैज्ञानिक हैं जिन्होंने अपने समय (जन्म : 476 ई.) के बारे में स्पष्ट जानकारी दी है।

निस्संकोच कहा जा सकता है कि आर्यभट प्राचीन भारत के सर्वश्रेष्ठ गणितज्ञ और ज्योतिषी थे। वे परंपराओं को तोड़नेवाले एक क्रांतिकारी विचारक भी थे। आर्यभट प्राचीन भारत के पहले वैज्ञानिक थे जिन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है और तारामंडल स्थिर है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया था कि सूर्य और चंद्र को ग्रहण क्यों लगते हैं। आर्यभट की युग-पद्धति ज्यादा वैज्ञानिक थी। उन्होंने यह भी कहा था कि सृष्टि का कोई आदि-अंत नहीं।

आर्यभट की गणित के क्षेत्र में उपलब्धियाँ भी बड़े महत्त्व की हैं। उन्होंने वृत्त की परिधि और व्यास के अनुपात (π) का जो मान (3.1416) दिया उसका आज भी स्कूलों में इस्तेमाल होता है। आज स्कूलों में जो त्रिकोणमिति पढ़ाई जाती है वह भी आर्यभट की मूल विधि पर आधारित है। आर्यभट ने एक विशिष्ट प्रकार के समीकरणों को, जिन्हें प्राचीन भारत में **कुट्टक** कहा जाता था, हल करने का तरीका खोज निकाला।

आर्यभट अपने समय के, न केवल भारत के बल्कि संसार के, एक महान वैज्ञानिक थे; इसीलिए भारत के पहले वैज्ञानिक उपग्रह को आर्यभट नाम दिया गया। वस्तुतः उसके बाद ही जनसाधारण को प्राचीन भारत के इस महान वैज्ञानिक के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी मिलने लगी।

बहुत दिनों से इच्छा थी कि मैं आर्यभट के बारे में विद्यार्थियों के लिए एक छोटी-सी पुस्तक लिखूँ। पुस्तक तैयार हो गई, तो लगा कि अनेक विद्यार्थियों को केवल इतनी जानकारी से संतोष नहीं होगा, अध्यापक-वर्ग भी आर्यभट के बारे में कुछ अधिक विस्तार से जानना चाहेगा। इसलिए मैंने **संदर्भ और टिप्पणियों** के अंतर्गत अतिरिक्त विवरण का भी समावेश कर दिया। जो अध्येता आर्यभट और भारतीय गणित तथा ज्योतिष के बारे में व्यापक अध्ययन करना चाहते हैं उनके उपयोग के लिए मैंने अंत में पठनीय ग्रंथों की सूची दी है।

आशा है, भारतीय विज्ञान और वैज्ञानिकों से संबंधित मेरी अन्य पुस्तकों की तरह इस पुस्तक का भी स्वागत होगा।

'अमरावती'
सी-210, पांडव नगर,
दिल्ली-110 092

गुणाकर मुले

क्रम

गंगा, गंडक और सोन का संगम

बहुत पुरानी बात है। करीब डेढ़ हजार साल पुरानी।

उस जमाने में आज के पटना शहर को **पाटलिपुत्र** कहते थे। यह नगर कुसुमपुर के नाम से भी जाना जाता था। बहुत बड़ा नगर था बल्कि कह सकते हैं कि उस समय यह हमारे देश का सबसे बड़ा नगर था। सीधी और चौड़ी सड़कें। कई मंजिली इमारतों की कतारें। हरे-भरे बाग-बगीचे। इन बगीचों में बड़ी तादाद में खिलनेवाले फूलों के कारण ही इस नगर को कुछ लोग **कुसुमपुर** अथवा **पुष्पपुर** भी कहते थे।

आज से कोई ढाई हजार साल पहले गंगा सोन और गंडक नदियों के संगम पर इस नगर की नींव पड़ी थी।[1] यह नगरी नंद राजाओं और चंद्रगुप्त तथा अशोक-जैसे प्रसिद्ध मौर्य सम्राटों की राजधानी थी। आरंभ में गुप्त सम्राटों ने भी

यहीं से देश पर शासन किया था। दूर-दूर तक इस नगर की कीर्ति फैली हुई थी। देश के ही नहीं, दूसरे देशों के यात्री भी इस नगर के दर्शन के लिए पहुँचते थे। राजधानी होने से यहाँ देशभर के नामी पंडित एकत्र होते थे। उनसे विद्या हासिल करने के लिए देश के कोने-कोने के विद्यार्थी भी यहाँ पहुँचते थे। पाटलिपुत्र नगर ज्योतिष के अध्ययन के लिए काफी मशहूर था।

इसी नगर की बात है। उस दिन सबेरे से ही सारे नगर में बड़ी चहल-पहल थी। संगम की ओर लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी थी। नगर के ही नहीं, आसपास के गाँवों के और दूर-दराज के इलाके के लोग भी संगम पर एकत्र हो रहे थे। सभी लोगों को दोपहर के उस खास अवसर का इंतजार था। सभी लोग उस मौके पर संगम में डुबकी लगाने के लिए वहाँ एकत्र हुए थे।

बात ही ऐसी थी। उस दिन सूर्य ग्रहण जो लगनेवाला था। नगर के धनी-मानी लोग सबेरे से ही दान-दक्षिणा देने में जुटे हुए थे। ब्राह्मणों और पुरोहितों की मौज थी। कथावाचक जगह-जगह कथा सुना रहे थे कि कैसे राहु नाम का राक्षस सूर्य-देवता को निगल जाता है, और तब ग्रहण लगता है।

दे दान तो छुटे गिरान !

कथा है—

विप्रचित्त नाम के एक ब्राह्मण थे। उनकी पत्नी का नाम सिंहिका था। काफी ज्यादा आयु होने पर सिंहिका ने एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम रखा गया—राहु। माँ-बाप के लाड़-प्यार ने राहु को नटखट और झगड़ालू स्वभाव का बना दिया था।

जब समुद्र-मंथन हुआ, तो उसमें से अन्य वस्तुओं के साथ अमृत भी निकला। उसे ग्रहण करने के लिए देवताओं की पंगत बैठी। वेश बदलकर और लुक-छिपकर राहु भी देवताओं की उस पंगत में शामिल हो गया। अमृत परोसा जाने लगा। राहु को भी अमृत मिला। मगर जैसे ही राहु ने अमृत के प्याले को मुँह से लगाया, वैसे ही सूर्य और चंद्र ने उसे पहचान लिया। उन्होंने तुरंत विष्णु को बताया। विष्णु ने तत्काल अपने चक्र से राहु का सिर काट दिया।

किंतु राहु ने थोड़ा-सा अमृत चख लिया था, इसलिए उसका सिर अमर बन गया था। उसे सूर्य और चंद्र पर बड़ा क्रोध आया। तब से, जब भी

मौका मिलता है, राहु राक्षस बनकर चंद्र अथवा सूर्य को निगलता रहता है।

चद्र-ग्रहण के अवसर पर राहु चद्र को निगल रहा है

वही राहु आज पुनः सूर्य को निगलने जा रहा था। भरी दोपहरी में धरती पर अंधकार छा जाएगा। लोग डरे हुए थे। ब्राह्मण-पुरोहित लोगों को समझा रहे थे—ग्रहण के समय उपवास रखो, खूब दान-पुन्न करो, ब्राह्मणों को दिल खोलकर दान-दक्षिणा दो। तभी इस राक्षस के चंगुल से सूर्य-देवता को जल्दी-से-जल्दी मुक्ति मिलेगी।

सभी ओर आवाजें सुनाई दे रही थीं—दे दान तो छुटे गिरान!

वेधशाला

पाटलिपुत्र नगर से थोड़ी दूर एक आश्रम में कुछ दूसरा ही माहौल था। वह आश्रम एक टीले पर था। वहाँ भी आज बड़ी चहल-पहल थी। लेकिन वह चहल-पहल कुछ दूसरे प्रकार की थी। वह आश्रम भी कुछ भिन्न प्रकार का था। टीले पर बसे उस आश्रम के लंबे-चौड़े आँगन में ताँबे, पीतल और लकड़ी के तरह-तरह के यंत्र रखे हुए थे। उनमें से कुछ यंत्र गोल थे, कुछ कटोरे के आकार के, कुछ वर्तुलाकार और कुछ शंकु के आकार के थे।

दरअसल, वह एक **वेधशाला** थी। आकाश के ग्रहों और तारों की स्थितियों और गतियों को जानने के लिए उन यंत्रों का उपयोग होता था। उस दिन उन यंत्रों के इर्द-गिर्द कई नामी ज्योतिषी और बहुत-से विद्यार्थी एकत्र हुए थे। वहाँ भी ग्रहण के उस अवसर की आतुरता से बाट देखी जा रही थी।

वहाँ के ज्योतिषी भलीभाँति जानते थे कि ठीक किस क्षण ग्रहण लगने वाला है, और ठीक किस क्षण छूटेगा। उन्होंने हिसाब लगाकर पहले

से ही भविष्यवाणी की थी कि ठीक किस समय ग्रहण लगेगा, यह कहाँ-कहाँ दिखाई देगा और कितने समय तक रहेगा। आज उन्हें देखना था कि उनका हिसाब ठीक निकलता है या नहीं। इसलिए सभी ज्योतिषी उत्सुकता से उस क्षण का इंतजार कर रहे थे।

उनमें से कुछ आचार्य और विद्यार्थी इस बात पर भी चर्चा कर रहे थे कि ग्रहण क्यों लगता है। कुछ आचार्य यह भी कह रहे थे कि इसमें बहस करने की कोई जरूरत नहीं है। पुराणों में लिखा है, दूसरे धर्मग्रंथों में भी लिखा है, कि राहु नाम का राक्षस ही सूर्य और चंद्र को निगलता है। तभी ग्रहण लगते हैं। हमें धर्मग्रंथों की बातों पर यकीन करना चाहिए।

लेकिन वहाँ एक तरुण विद्यार्थी ऐसा भी था जो यह मानने के लिए तैयार नहीं था कि किसी राहु के कारण ग्रहण लगता है। वह साधारण विद्यार्थी नहीं था। वह करीब बीस साल का तरुण पंडित था। दक्षिण भारत के गोदावरी नदी तट के अश्मक जनपद[2] से ज्योतिष और गणित का गहन अध्ययन करने के लिए वह इतनी दूर पाटलिपुत्र आया था। वह गणितशास्त्र का पंडित था।

बड़े-बड़े आचार्य उसकी बुद्धि का लोहा मानते थे। मगर उसके विचार क्रांतिकारी थे। वह आँख मूँदकर शास्त्रों की पुरानी बातें मानने को तैयार नहीं था। इसीलिए जब-तब अपने सही विचार सुना देता था। पुराणपंथी लोग तिलमिला जाते थे।

आज सूर्य-ग्रहण का दिन था। इसलिए बड़े यकीन के साथ वह सुना रहा था, समझा रहा था—पुराणों और धर्मग्रंथों में लिखी यह बात सच नहीं है कि राहु नाम का कोई राक्षस सूर्य को निगल जाता है, और दान-पुन्न करने से सूर्य-देवता को छुटकारा मिलता है।
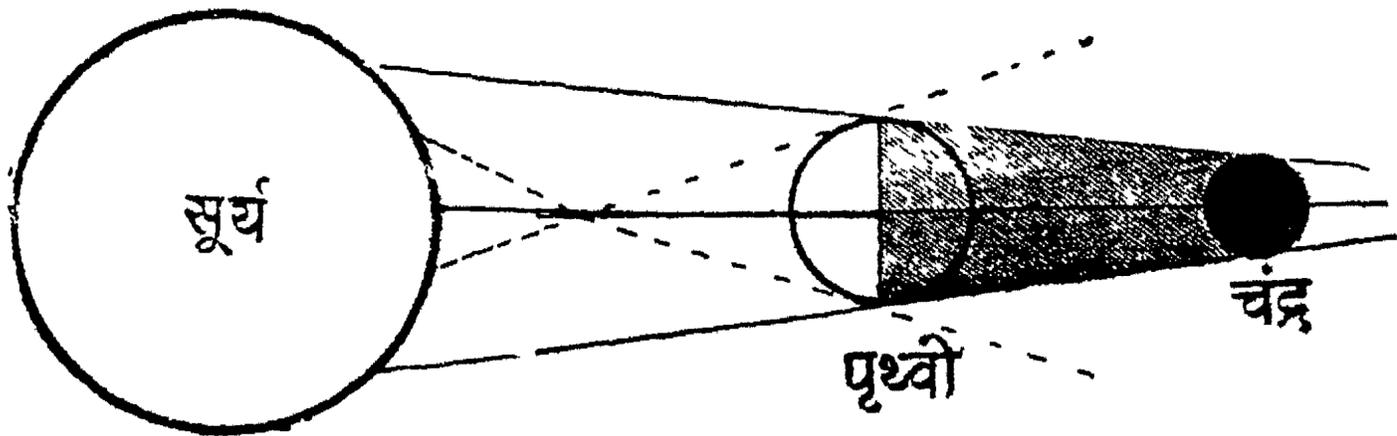
जब पृथ्वी की छाया चंद्र पर पड़ती है, तब चंद्रग्रहण होता है

वह अपने आसपास के विद्यार्थियों को ग्रहणों का सही कारण समझा रहा था—पृथ्वी की बड़ी छाया जब चंद्रमा पर पड़ती है, तो चंद्र-ग्रहण होता है। और इसी प्रकार, चंद्र जब पृथ्वी और

सूर्य के बीच आता है और वह सूर्य को ढक लेता है तब सूर्य-ग्रहण होता है।[3] आज भी ऐसा ही होनेवाला है। गणित की सहायता से हिसाब लगाकर हम पहले से ही जान सकते हैं कि पृथ्वी और सूर्य के बीच में ठीक किस समय चंद्र आएगा और किस स्थान पर ऐसा सूर्य-ग्रहण दिखाई देगा।
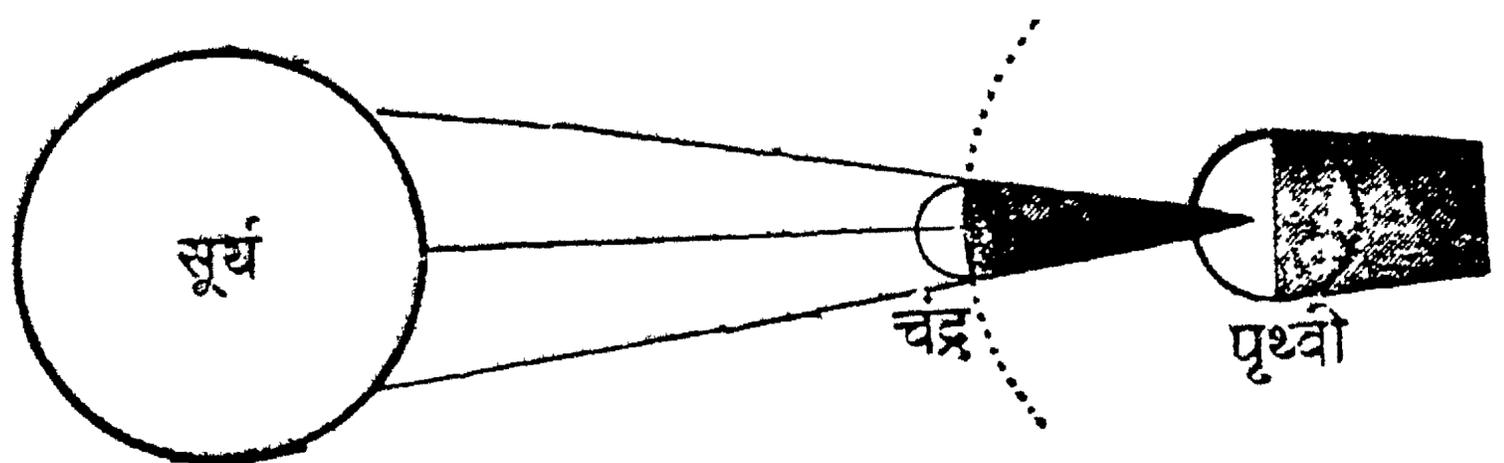
जब चंद्र की छाया पृथ्वी पर पडती है, तब सूर्यग्रहण होता है

कोई राहु सूर्य को निगलता है, यह बात मनगढ़ंत है। यह पुराणों की कथा है। दरअसल, शनि, मंगल या शुक्र की तरह राहु कोई ठोस ग्रह नहीं है। ज्योतिषशास्त्र में महज एक काल्पनिक बिंदु को राहु का नाम दिया गया है। इसलिए यह कहना गलत है कि कोई राहु नाम का राक्षस सूर्य या चंद्र को निगल जाता है। ग्रहणों के समय इतनी हायतोबा मचाने की भी जरूरत नहीं है, यह प्राकृतिक नियम है, और किसी दान-पुन्न से इसे

बदला नहीं जा सकता है—वह तरुण पंडित बड़े विश्वास के साथ अपनी बात कह रहा था।

पाटलिपुत्र की उस वेधशाला के दूसरे ज्योतिषी उस तरुण पंडित के ऐसे क्रांतिकारी विचारों से परिचित थे और वे उसका आदर करते थे। जो ज्योतिषी लकीर के फकीर थे वे उस तरुण पंडित के विचारों को सुनकर तिलमिला उठते थे। परंपरा से प्राप्त विचारों का खंडन करना उन्हें बर्दाश्त नहीं होता था। परंतु लाचार थे। उस तरुण के तर्कों का खंडन करने का साहस उनमें नहीं था। सचमुच ही बड़ी तेज बुद्धि थी उस तरुण की। ग्रहणों के बारे में ही नहीं, आकाश की दूसरी अनेक घटनाओं के बारे में भी उसके अपने स्वतंत्र विचार थे।

आश्मकाचार्य

उस तरुण पंडित का **नाम था आर्यभट**। कभी-कभी लोग उन्हें **आर्यभट्ट** के नाम से भी पुकारते थे। पर उनका सही नाम आर्यभट ही था।[4]

हम बता चुके हैं कि आर्यभट दक्षिण भारत के

अश्मक प्रदेश से पाटलिपुत्र आए थे। अश्मक प्रदेश में पैदा हुए थे इसलिए बाद में लोग उन्हें **आश्मकाचार्य**[5] के नाम से जानने लगे थे। अपने प्रदेश में उनकी कीर्ति पहले ही फैल चुकी थी। अब कुछ अर्सा पहले वे उस जमाने के प्रख्यात नगर पाटलिपुत्र पहुँचे थे। यहाँ आने का उनका असली मकसद था अपने नए विचारों का प्रचार करके लोगों के अंधविश्वास को दूर करना। लेकिन साथ ही वे उत्तर भारत के ज्योतिषियों के विचारों का भी अध्ययन करना चाहते थे।

आर्यभट जन्म-कुंडली देखकर भविष्य बतानेवाले ज्योतिषी नहीं थे। वे एक कुशल गणितज्ञ थे। और हम जानते हैं कि आकाश के ग्रहों और नक्षत्रों की गतियों का ठीक-ठीक हिसाब लगाने के लिए गणित का पंडित होना अत्यंत जरूरी है। आर्यभट ऐसे ही ज्योतिषी थे। छोटी उम्र में ही उन्होंने गणित और ज्योतिष का गहन अध्ययन किया था।

आर्यभट राजाओं और मंत्रियों की खुशामद करनेवाले ज्योतिषी भी नहीं थे। दरअसल, वे एक शुद्ध वैज्ञानिक थे। उनका मकसद था आकाश की घटनाओं का अध्ययन करना, ग्रहों और तारों

के बारे में सही-सही जानकारी हासिल करना। इसीलिए निर्भय होकर उन्होंने अपने विचार सामने रखे।

ग्रहणों के बारे में आर्यभट के विचार हम जान चुके हैं। इसी प्रकार हमारी धरती के बारे में भी उनके विचार बड़े क्रांतिकारी थे।

पृथ्वी घूमती है

उस जमाने में सभी लोग, ज्योतिषी भी, यही समझते थे कि हमारी पृथ्वी आकाश में स्थिर है। धर्मग्रंथों का भी यही कहना था कि हमारी पृथ्वी विश्व के मध्यभाग में स्थिर है, और आकाश के तारे इसकी परिक्रमा करते रहते हैं। सैकड़ों वर्षों से लोग यही बात मानते आ रहे थे। किसी ज्योतिषी के मन में इस सवाल को लेकर कोई नई बात उठी भी होगी, तो भी धर्मशास्त्रों के वचनों के खिलाफ कुछ कहने का साहस उसमें नहीं था।

लेकिन आर्यभट में ऐसा साहस था। अपनी बात कहने में वे बिलकुल नहीं चूकते थे। ऐसे समय वह धार्मिक विचारों की भी परवाह नहीं

करते थे। इसीलिए बड़े साहस के साथ उन्होंने पृथ्वी की गति के बारे में अपने नए विचार खुलकर जाहिर किए।

आर्यभट हमारे देश के पहले ज्योतिषी थे जिन्होंने साफ शब्दों में कहा कि पृथ्वी स्थिर नही है। यह अपनी धुरी पर चक्कर लगाती है। यह उसी प्रकार अपनी धुरी पर चक्कर लगाती है जैसे लट्टू अपनी कील पर घूमता है। पृथ्वी अपनी धुरी पर चक्कर लगाती है और आकाश का तारामंडल स्थिर है—आर्यभट बड़े यकीन के साथ कहते थे।[6]

—तो फिर आकाश के तारे हमें चक्कर लगाते क्यों दिखाई देते हैं? पृथ्वी के चक्कर लगाने का पता हमें क्यों नहीं चलता?

आर्यभट का उत्तर था—समझ लो कि नदी में एक नाव है और वह धारा के साथ तेजी से आगे बढ़ रही है। तब उसमें बैठा हुआ आदमी किनारे की स्थिर वस्तुओं को उलटी दिशा में जाता हुआ अनुभव करता है। उसी प्रकार आकाश के तारों की बात है। पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है और उसके साथ हम भी घूमते रहते हैं, इसलिए आकाश का स्थिर तारामंडल हमें पूरब से

, पश्चिम की ओर जाता जान पड़ता है। दरअसल यह तारामंडल स्थिर है। पृथ्वी ही अपनी धुरी पर चक्कर लगाती है।[7]

आज तो स्कूल के विद्यार्थी भी जानते हैं कि पृथ्वी अपनी धुरी पर चक्कर लगाती है। सभी जानते हैं कि इसी कारण धरती पर रात और दिन का चक्र चलता रहता है। लेकिन आर्यभट के जमाने में यह एकदम नया विचार था। हमारे देश में आर्यभट के पहले किसी ने भी यह बात नहीं कही थी। धर्मग्रंथों में भी यही लिखा था कि पृथ्वी स्थिर है।
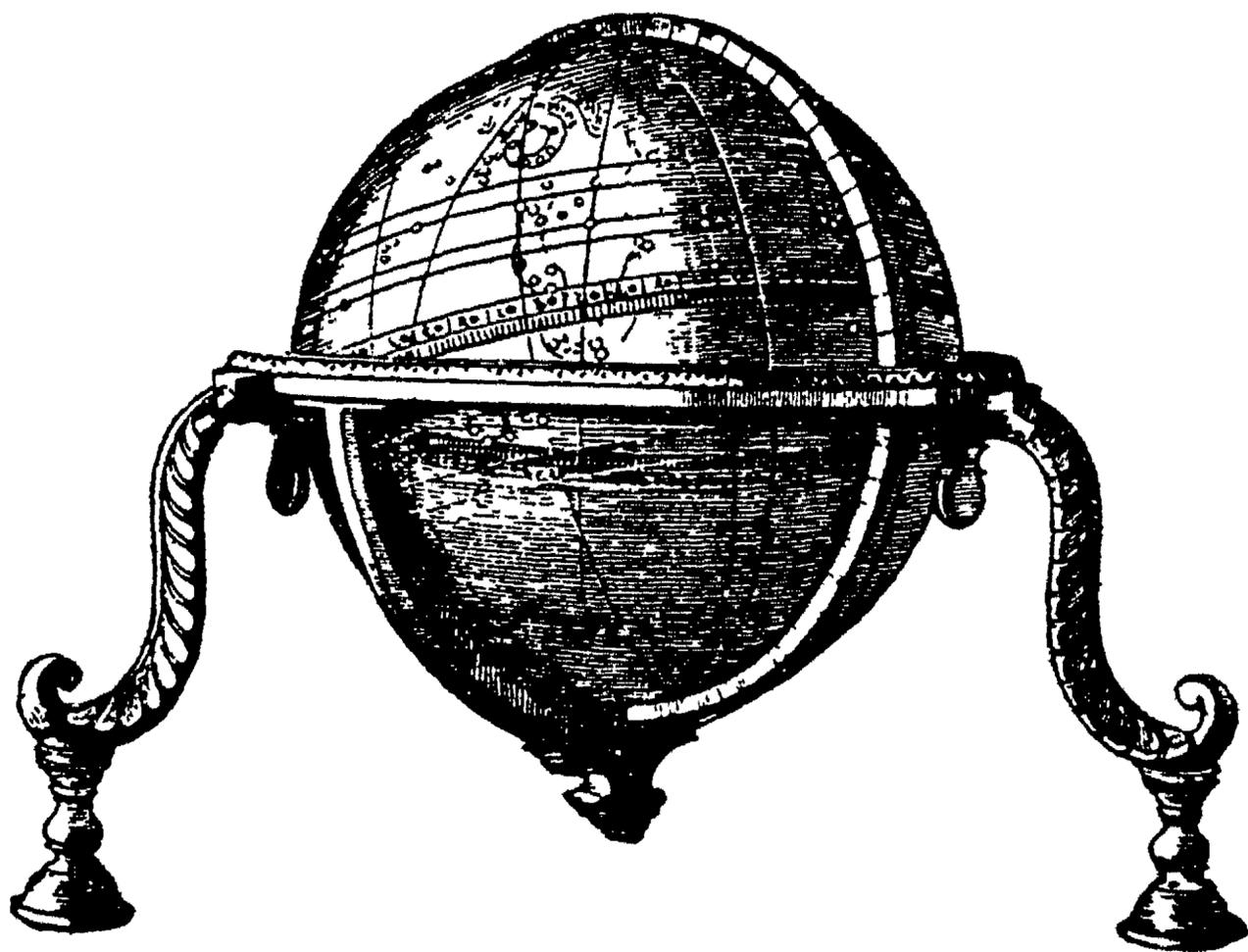
काँसे का बना हुआ भारतीय खगोल, जिस पर तारांकन चाँदी से किया गया है (लगभग 1600 ई.)

किसकी बात मानें ? धर्मग्रंथों की या आर्यभट की ? जहाँ तक ग्रहणों की बात है, कुछ ज्योतिषियों ने आर्यभट के मत को मान लिया था । परंतु कोई भी ज्योतिषी उनके इस मत को मानने के लिए तैयार नहीं होता था कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है ।

है न ताज्जुब की बात ? आज यदि कोई कहे कि पृथ्वी स्थिर है, तो लोग उसे पागल समझेंगे, उसकी बात पर हँसेंगे । लेकिन उस जमाने में लोग आर्यभट के मत की ही हँसी उड़ाते होंगे । सवाल पूछते होंगे—यदि पृथ्वी घूमती है, तो फिर ऊपर फेंकी हुई वस्तु ठीक उसी स्थान पर आकर क्यों गिरती है ?

लेकिन आर्यभट अपने विचार के पक्के थे । शायद कुछ ज्योतिषी उनके इस विचार से सहमत भी थे, लेकिन इसे खुलकर कबूल करने में उन्हें संकोच होता था । पुराणों की बातों का, धर्मग्रंथों की बातों का विरोध करने का उनमें साहस नहीं था ।

यही कारण है कि आर्यभट का मत सही होने पर भी आगे सदियों तक हमारे देश के ज्योतिषी, बड़े-बड़े ज्योतिषी भी, यही मानते रहे कि पृथ्वी स्थिर है । मजे की बात तो यह है कि आर्यभट के

शिष्य, और उनके शिष्यों के शिष्य भी, लोकभय के कारण अपने आचार्य के इस सही मत को खुलकर नहीं बता पाते थे।[8]

आर्यभट का मत सही था। पुराणों और धर्मग्रंथों की बात गलत थी। फिर भी सदियों तक गलत बात ही मानी जाती रही!

ऐसा सैकड़ों बातों के बारे में हुआ है। हमारे देश में ही नहीं, दूसरे देशों में भी हुआ है। पुराने जमाने में धर्मग्रंथों की बातों का विरोध करना आसान काम नहीं था।

विचारों की आजादी

यूरोप के महान ज्योतिषी **कोपर्निकस** (1473-1543 ई.) का किस्सा बहुतों को मालूम होगा। कोपर्निकस आर्यभट के करीब एक हजार साल बाद हुए। कोपर्निकस ने आर्यभट से भी आगे बढ़कर एक नया क्रांतिकारी मत पेश किया। कोपर्निकस ने कहा कि हमारी पृथ्वी, न केवल एक दिन में अपनी धुरी पर एक चक्कर लगाती है, बल्कि यह एक साल में सूर्य का भी एक चक्कर लगाती है। कोपर्निकस ने कहा कि सूर्य स्थिर है और पृथ्वी सहित अन्य सभी ग्रह उसकी परिक्रमा

करते हैं ।

कोपर्निकस ने बड़ा साहस बटोरकर यह मत सामने रखा था । वह जानते थे कि उनका यह मत ईसाई धर्म के मत से मेल नहीं खाता । वह जानते थे कि धर्म-गुरु उनके इस मत का कड़ा विरोध करेंगे, उन्हें सजा देंगे । इसलिए उन्होंने जो ग्रंथ लिखा था वह उनकी मृत्यु के बाद ही प्रकाशित हो पाया ।

यहाँ हमने कोपर्निकस का जिक्र किया है, तो एक बात जान लेनी जरूरी है । आर्यभट हमारे देश

कोपर्निकस (1473-1543 ई.)

के पहले ज्योतिषी थे जिन्होंने कहा था कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है। आर्यभट ने यह नहीं कहा था कि पृथ्वी सूर्य का भी चक्कर लगाती है। कोपर्निकस ही वह पहले ज्योतिषी थे जिन्होंने कहा था कि पृथ्वी एक साल में सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करती है।

कोपर्निकस को अपने विचार जाहिर करने में भले ही खतरा महसूस हुआ हो, लेकिन हमारे देश का वातावरण थोड़ा भिन्न था। पुराने जमाने में हमारे देश में धार्मिक विचारों का प्रचार करने की आजादी थी, तो दूसरी तरफ धार्मिक बातों का खंडन करने की भी काफी आजादी थी। उस जमाने में हमारे देश में ऐसे कई पंथ थे, संप्रदाय थे, जो धर्म-कर्म के ढकोसलों को नहीं मानते थे। मजे की बात तो यह है कि लाखों लोग ऐसे नास्तिक संप्रदायों के अनुयायी थे।

हमारे देश में धार्मिक आजादी का ऐसा वातावरण था, इसीलिए आर्यभट को अपने धर्म-विरोधी, किंतु सही विचार, पेश करने में खास कठिनाई नहीं हुई। छोटी उम्र में ही आर्यभट ने एक पुस्तक लिखी। उस छोटी-सी पुस्तक में ही उन्होंने अपने सारे विचार, अपनी सारी जानकारी

भर दी । पुस्तक क्या है, गागर में सागर ! अद्भुत बात तो यह है कि आर्यभट ने जब यह पुस्तक लिखी उस समय उनकी आयु केवल तेईस साल की थी !

गागर में सागर

तेईस साल का एक तरुण पंडित । और उसने एक पुस्तक लिखी, छोटी-सी पुस्तक ।

आज दुनिया में हर साल लाखों नई पुस्तकें छपती हैं । हमारे देश में ही हर रोज कई सौ पुस्तकें छपती होंगी । बढ़िया कागज़, बढ़िया छपाई, बढ़िया जिल्द । एक पुस्तक की हजारों प्रतियाँ आसानी से छप जाती हैं ।

लेकिन पुराने जमाने में पुस्तक की तैयारी में बड़ी कठिनाइयाँ थीं । पहली बात तो यही है कि आर्यभट के जमाने में आज-जैसा कागज नहीं था । आर्यभट के जमाने में पुस्तकें भोजपत्रों अथवा ताड़पत्रों पर लिखी जाती थीं । फिर शिष्यगण अपने आचार्य की पुस्तक की कुछ प्रतियाँ तैयार करते थे ।

आज की तरह छपाई की सुविधा नहीं थी, इसलिए पंडित लोग भी यही कोशिश करते थे कि पुस्तक छोटी-से-छोटी बने । पुस्तक छोटी हो, तो उसे कंठस्थ भी किया जा सकता था ।

पुस्तक यदि कविता में लिखी जाए, तो छोटी बन सकती है । कविता में लिखी गई पुस्तक को याद करने में भी आसानी होती है । इसलिए पुराने जमाने में पंडित अपनी पुस्तकों को छोटी-से-छोटी बनाने की कोशिश करते थे ।

आजकल कुछ उलटी बात है । आजकल के बहुत-से लेखक मोटे-मोटे पोथे लिखते हैं । परंतु आर्यभट के जमाने में मोटे-मोटे पोथे लिखना कोई बहुत अच्छी बात नहीं समझी जाती थी । कम-से-कम शब्दों में अधिक-से-अधिक बातें भर देने से ही पंडित की तारीफ होती थी । उस जमाने का पंडित अपनी लिखी हुई चीज में एक मात्रा भी कम कर पाता तो उसे अपार आनंद होता था । कहा भी गया है कि पुराने जमाने में पंडितों को एक मात्रा कम कर पाने पर वैसा ही आनंद मिलता था जैसे कि पुत्र पैदा होने पर होता है !

आर्यभट ने केवल तेईस साल की छोटी उम्र में ऐसा ही एक छोटा ग्रंथ लिखा । यह ग्रंथ उन्होंने

कविता में लिखा है। भाषा है संस्कृत। उस जमाने में पंडित लोग अपने ग्रंथ ज्यादातर संस्कृत भाषा में ही लिखते थे। आज की हमारी हिंदी, मराठी, बंगला आदि भाषाएँ संस्कृत से ही निकली हैं।

यह बात नहीं है कि उस जमाने के सभी पंडित छोटे-छोटे ग्रंथ ही लिखते थे। उस जमाने में महाभारत जैसे बड़े-बड़े पोथे भी लिखे गए। बहुत-सारे पुराण लिखे गए। इन पुराणों में छोटी-छोटी बातों को खूब बढ़ा-चढ़ाकर बताया गया है। इनमें बहुत-सारे मनगढ़ंत किस्से भी हैं।

उस जमाने में कुछ ज्योतिषियों ने भी बड़े-बड़े ग्रंथों की रचना की है। **वराहमिहिर** की ही बात ले लीजिए।[9] वराहमिहिर भी हमारे देश के एक नामी ज्योतिषी थे। वराहमिहिर भी आर्यभट के समय में ही हुए, लगभग डेढ़ हजार साल पहले; परंतु आयु में वे आर्यभट से छोटे थे। वराह ने छोटे-बड़े कई सारे ग्रंथ लिखे। लेकिन वराह के इन ग्रंथों में फिजूल की बहुत सारी बातें ठूँस दी गई हैं।

आर्यभट का ग्रंथ ऐसा नहीं है। इसमें ऐसी

कोई बात नहीं है जिसका गणित या ज्योतिष से कोई ताल्लुक न हो। इसमें एक शब्द भी फिजूल का नहीं है। आर्यभट का ग्रंथ शुद्ध विज्ञान का ग्रंथ है।
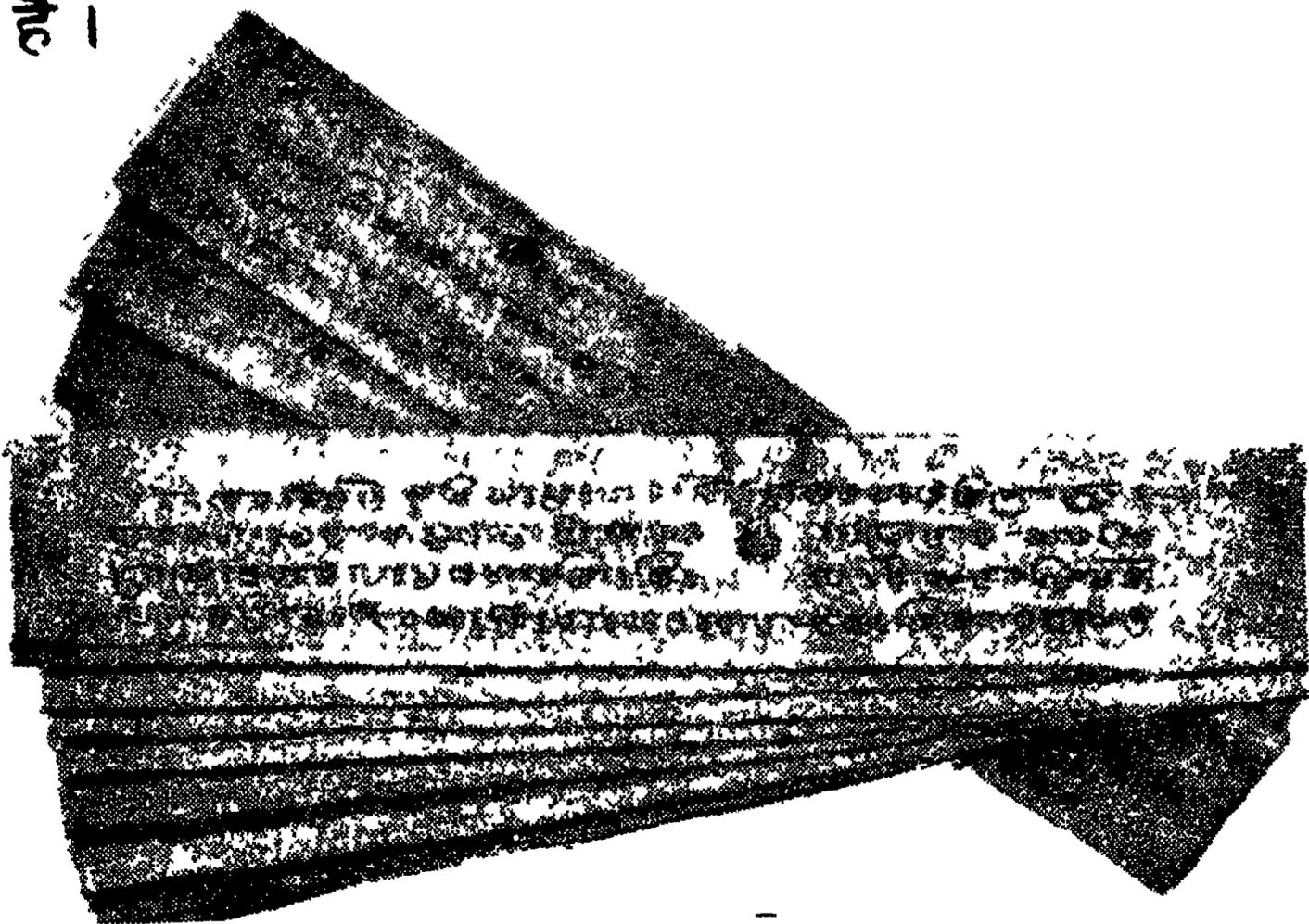
आर्यभटीय की ताडपत्र पर लिखी एक प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक

आर्यभट के इस ग्रंथ में कुल 121 श्लोक हैं। हर श्लोक में दो पंक्तियाँ। इसका मतलब यह हुआ कि पूरे ग्रंथ में कुल मिलाकर 242 पंक्तियाँ हैं।[10] आजकल इतनी पंक्तियों को केवल दस पृष्ठों में आसानी से छापा जा सकता है। बस, इतना ही बड़ा है आर्यभट का यह महान ग्रंथ!

आज के हिसाब से केवल दस पृष्ठों का ग्रंथ!

हम ही नहीं, दूसरे देशों के विद्वान भी यह

मानते हैं कि आर्यभट के समय में हमारा देश गणित और ज्योतिष में काफी आगे था। आर्यभट के समय तक हमारे देश में ज्योतिष के कई ग्रंथ लिखे जा चुके थे। गणित के मामले में भी हमारा देश काफी बढ़ा-चढ़ा था। सबसे बड़ी बात यह है कि आर्यभट के समय तक हमारे देश में नए अंकों की खोज हो चुकी थी। शून्य सहित केवल दस अंकों से सारी संख्याएँ लिखने का यह अद्‌भुत तरीका हमारे देश में ही खोजा गया है। आज सारे संसार में इसी तरीके का इस्तेमाल होता है। संसार को भारत की यह एक बहुत बड़ी देन है।[11]

उस जमाने में गणित और ज्योतिष में भारत इतना आगे था, फिर भी आर्यभट ने उन सारी बातों को अपने छोटे-से ग्रंथ में भर दिया है। उस समय तक गणित और ज्योतिष के बारे में जितनी बातें खोजी गई थीं उन सबको केवल 121 श्लोकों में भर दिया है। पुराना ज्ञान ही नहीं, उन्होंने नई खोजी हुई अपनी बातें भी उसमें जोड़ दी हैं। अपने इसी ग्रंथ के एक श्लोक में उन्होंने ग्रहणों का वैज्ञानिक कारण बताया है। एक अन्य श्लोक में उन्होंने यह बताया है कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है। आर्यभट ने अपने इस ग्रंथ में और भी अनेक नई बातें बताई हैं।

'कंजूस' पंडित

आजकल के ग्रंथों में लेखक अपने बारे में भी थोड़ी-बहुत जानकारी देते हैं। पुराने जमाने में हमारे देश के पंडित इस मामले में बड़े कंजूस थे। बड़े-बड़े पंडितों के बारे में, कवियों और नाटककारों के बारे में, हमें कहीं कोई जानकारी नहीं मिलती। बहुतों के बारे में तो हम यह भी नहीं बता सकते कि वे ठीक किस समय में हुए।

प्राचीन भारत के कई गणितज्ञों और ज्योतिषियों का भी यही हाल है। आर्यभट के पहले हमारे देश में अनेक ज्योतिषी हुए, गणितज्ञ हुए। आर्यभट के पहले के गणित और ज्योतिष के कुछ ग्रंथ भी मिलते हैं। पर आर्यभट के पहले के इन ग्रंथों को ठीक किस समय रचा गया, और किन्होंने लिखा, इसके बारे में हमें कोई ठोस जानकारी नहीं मिलती।

मिसाल के तौर पर, ज्योतिष का एक पुराना ग्रंथ है **वेदांग-ज्योतिष**। कहते हैं कि किसी **लगध** ऋषि ने इस ग्रंथ की रचना की थी। पर दावे के साथ कुछ नहीं कहा जा सकता। हम यह भी नहीं जानते कि यह ग्रंथ ठीक किस साल या

किस सदी में लिखा गया।[12]

चूँकि ऐसे ग्रंथों के लेखकों के बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती, इसलिए पुराने जमाने से ही लोग मानने लग गए थे कि इनकी रचना दैवी शक्ति से हुई है।

दरअसल, ऐसी बात नहीं है। कोई भी ग्रंथ आसमान से नहीं टपका है। कोई भी ग्रंथ क्यों न हो, उसकी रचना भी हाड़-मांस के आदमी ने ही की है। लेकिन उस आदमी का अता-पता नहीं है, इसलिए बाद के लोग मानने लग गए कि उसकी रचना दैवी शक्ति से हुई है।

एक बार जब यह मान लिया कि किसी ग्रंथ की रचना आदमी ने नहीं की है, दैवी शक्ति से हुई है, तो फिर उसमें सुधार करने की गुंजाइश नहीं रही। इस प्रकार ज्ञान-विज्ञान को आगे बढ़ाने में बड़ी रुकावट पैदा हुई।

आर्यभट का ग्रंथ पहले के सभी ग्रंथों से निराला है। यह भारतीय गणित और ज्योतिष का पहला ग्रंथ है जिसके लेखक के बारे में हमें ठोस जानकारी मिलती है। भारतीय गणित और ज्योतिष का यह पहला ग्रंथ है जिसके बारे में हम यकीन के साथ जानते हैं कि यह ठीक किस साल

लिखा गया।

यह एक बहुत बड़ी बात है। जहाँ अधिकतर प्राचीन ग्रंथों और लेखकों के बारे में हमें कोई जानकारी नहीं मिलती, वहाँ किसी ग्रंथ और ग्रंथकार के बारे में थोड़ी-सी भी ठोस जानकारी मिल जाना बहुत बड़ी बात है।

आर्यभट के ग्रंथ में फिजूल की एक भी बात नहीं है। आर्यभट भी शायद अपने बारे में कोई जानकारी नहीं देना चाहते थे। फिर भी उनके ग्रंथ में उनके जीवन की एक-दो बातों की जानकारी हमें मिल जाती है।

अपने ग्रंथ में उन्होंने अपना नाम दिया है—**आर्यभट**। कुछ लोग उन्हें आर्यभट्ट लिखते हैं, तो गलती करते हैं। अभी कुछ अर्सा पहले कुछ लोगों ने तो यहाँ तक कहा है कि, चूँकि वह ब्राह्मण थे इसलिए उनका नाम आर्यभट्ट ही होना चाहिए, आर्यभट नहीं! है न मजेदार बात?

दरअसल, आर्यभट भी बड़ा आदरणीय नाम है। 'भट' का अर्थ है योद्धा![13]

आर्यभट ने स्वयं अपने ग्रंथ को नाम दिया—**आर्यभटीय**। चूँकि आर्यभट दक्षिण के अश्मक राज्य में पैदा हुए थे, इसलिए बाद में उनका ग्रंथ

आश्मकतंत्र के नाम से और वे स्वयं **आश्मकाचार्य** के नाम से प्रसिद्ध हुए।[14]

इसी ग्रंथ के एक श्लोक की एक पंक्ति में आर्यभट ने जानकारी दी है कि, वह ऐसे ज्ञान का वर्णन कर रहे हैं जिसका कुसुमपुर यानी पाटलिपुत्र में आदर होता है।

इस जानकारी से सिर्फ इतना ही नतीजा निकाला जा सकता है कि आर्यभट ने अपने ग्रंथ की रचना कुसुमपुर में बैठकर की है। उन्होंने यह नहीं लिखा कि उनका जन्म कुसुमपुर (पाटलिपुत्र यानी पटना) में हुआ।

जन्म-काल

हम नहीं जानते कि आर्यभट का जन्म किस नगर या गाँव में हुआ था। उनकी शिष्य-परंपरा के बाद के लेखक हमें सिर्फ इतनी ही जानकारी देते हैं कि वे अश्मक जनपद के निवासी थे।

हमें आर्यभट के माता-पिता और गुरु के बारे में भी कोई जानकारी नहीं मिलती। आर्यभट ने अपने ग्रंथ में किसी राजा का भी उल्लेख नहीं

किया है। इससे पता चलता है कि वह राजदरबार की शान-शौकत से दूर ही थे।[15]

आर्यभट ने अपने ग्रंथ में अपने बारे में महत्त्व की एक और सूचना दी है। एक श्लोक में वे बताते हैं—तीन युग बीत गए थे और उसके बाद साठ वर्षों की साठ अवधियाँ (3600 वर्ष) गुजर गई थीं, तब मेरे जन्म के बाद 23 वर्ष हो चुके थे।[16]

यहाँ तीन युगों का मतलब है—कृत, त्रेता और द्वापर। आर्यभट आगे बताते हैं कि चौथे कलियुग के जब 3600 शक वर्ष बीत गए, उस समय मैं 23 साल का था। भारतीय ज्योतिषी शककाल का आरंभ 3179 कलि से मानते हैं। इसलिए 3600 – 3179 = 421 शक वर्ष में आर्यभट 23 साल के थे।

शक वर्ष में 78 की संख्या जोड़ने से ईसवी सन् का वर्ष मिलता है। अतः 421 + 78 = 499 ई. में आर्यभट 23 साल के थे। अर्थात्, आर्यभट का जन्म 476 ई. में हुआ था।

वैसे, देखा जाए तो यह एक साधारण-सी जानकारी है, पर भारतीय गणित और ज्योतिष के इतिहास में इस जानकारी का बहुत बड़ा महत्त्व

है। आर्यभट हमारे देश के पहले ज्योतिषी हैं जिनके बारे में हमें साफ-साफ सूचना मिलती है कि वह किस साल पैदा हुए थे।

बस, आर्यभट के जीवन के बारे में इससे अधिक हमें कोई जानकारी नहीं मिलती। हम नहीं जानते कि उन्होंने अपना आगे का जीवन कहाँ गुजारा। हम यह भी नहीं जानते कि वह कितने साल जीवित रहे।

दरअसल, आर्यभट ने स्वयं साफ-साफ शब्दों में यह नहीं कहा है कि उन्होंने अपने ग्रंथ की रचना 23 साल की आयु में की है। उनके कथन के आधार पर आजकल के अनेक विद्वानों ने यह नतीजा निकाला है कि ग्रंथ लिखते समय आर्यभट की आयु 23 साल की थी।

तेईस साल की आयु में ऐसे ग्रंथ की रचना कोई अनोखी बात नहीं है। हम जानते हैं कि संसार के बड़े-बड़े वैज्ञानिकों ने काफी कम उम्र में ही अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखाया है। महान गणितज्ञों के बारे में तो अक्सर ऐसा ही हुआ है। आर्यभट भी एक महान गणितज्ञ थे, एक महान ज्योतिषी भी। प्राचीन जगत के महान वैज्ञानिकों में आज उनकी गणना होती है। इसलिए आर्यभट

ने 23 साल की आयु में अपने ग्रंथ की रचना की हो, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है।

वराहमिहिर ने ज्योतिष पर कई ग्रंथ लिखे। ब्रह्मगुप्त[17] और भास्कराचार्य[18] के एक से अधिक ग्रंथ मिलते हैं। लेकिन आर्यभट का केवल एक ही ग्रंथ मिलता है—कुल जमा 121 श्लोकों का ग्रंथ।

आर्यभट की उपेक्षा

आर्यभट ने शायद एक-दो पुस्तकें और लिखी होंगी। परंतु वे आज नहीं मिलतीं।[19] उनकी यह **आर्यभटीय** पुस्तक भी बड़ी मुश्किल से ही नष्ट होते-होते बच पाई है।[20]

ऐसा क्यों हुआ? आर्यभट जब इतने बड़े गणितज्ञ थे, ज्योतिषी थे, तो फिर उनके ग्रंथों को जतन से क्यों नहीं रखा गया? वराहमिहिर के ग्रंथ हमेशा पढ़े जाते रहें। आज फुटपाथ पर बैठकर भविष्य भाखनेवाले जोतिसी के पास भी वराह की एक-दो पुस्तकें देखने को मिल जाती हैं। फिर क्या कारण है कि आर्यभट-जैसे महान वैज्ञानिक

की पुस्तकों को हिफाजत से नहीं रखा गया? उनकी आर्यभटीय पुस्तक की हाथ की लिखी कुछ प्रतियाँ भी बड़ी मुश्किल से ही मिली हैं। अभी दो सौ साल पहले जब नए सिरे से प्राचीन भारत के गणित और ज्योतिष का अध्ययन शुरू हुआ, तो उस समय विद्वानों को आर्यभट के इस ग्रंथ की प्रति उपलब्ध नहीं थी। अभी कोई सवा सौ साल पहले दक्षिण की मलयालम लिपि में इस ग्रंथ की दो-तीन प्रतियाँ मिलीं। तभी जाकर हमें और सारे संसार को प्राचीन भारत के इस महान वैज्ञानिक के बारे में अधिक जानकारी मिली।

आख्यान-कथाओंवाले प्राचीन भारत के अनेक ग्रंथ सदियों तक जीवित रहे, पूजित रहे। दूसरी ओर, **आर्यभटीय**-जैसे वैज्ञानिक ग्रंथ भुला दिए गए, तो इससे हमें बड़ा आश्चर्य भी नहीं होना चाहिए। हमने देखा है कि आर्यभट पुराण-पंथी नहीं थे, दकियानूस नहीं थे। उन्होंने अपनी बात खुलकर कही है। और उनकी कई बातें धार्मिक मतों के खिलाफ थीं। शायद इसीलिए बाद में आर्यभट के ग्रंथ को जान-बूझकर भुला दिया गया। दूसरे अनेक बढ़िया ग्रंथों की ऐसी ही दुर्गति हुई है।

इसका मतलब यह नहीं है कि आरंभ में आर्यभट के ग्रंथ को सम्मान नहीं मिला। आर्यभट के विचारों का आदर करनेवाले भी काफी लोग थे। इसलिए थोड़े ही समय में दूर-दूर तक उनके ग्रंथ की कीर्ति फैल गई थी। आगे हम देखेंगे कि आर्यभट का यह ग्रंथ अरब देशों में पहुँचा। अरब विद्वानों ने आर्यभट के मतों को अपनाया। फिर यूरोप में आर्यभट के मतों का प्रचार-प्रसार हुआ।

भारत में आर्यभट की शिष्य-परंपरा सदियों तक कायम रही। बाद के बड़े-बड़े ज्योतिषियों ने आर्यभट का आदर से नाम लिया है, उनके मतों का उल्लेख किया है। लेकिन बाद में जाकर केवल पंडितों को ही आर्यभट की महान देन की याद रही। सामान्य लोग भूल गए कि किसी समय हमारे देश में आर्यभट नाम के कोई महान गणितज्ञ और ज्योतिषी हुए थे।

इसीलिए हम कहते हैं कि आधुनिक काल में आर्यभट की खोज नए सिरे से हुई। आर्यभट की पुस्तक नए सिरे से खोजी गई। आर्यभट के मतों का नए सिरे से महत्त्व आँका गया।

आज हम जानते हैं कि आर्यभट प्राचीन भारत के संभवत: सबसे बड़े गणितज्ञ और ज्योतिषी थे।

आज दूसरे देशों के विद्वान भी मानते हैं कि आर्यभट अपने समय में संसार के एक चोटी के वैज्ञानिक थे।

लेकिन अब से कुछ ही साल पहले हममें से कितने लोगों ने आर्यभट का नाम सुना था ? कितने लोग जानते थे कि प्राचीन भारत में आर्यभट नाम का कोई बहुत बड़ा गणितज्ञ और ज्योतिषी हुआ था ?

आज सब कुछ बदल गया है। नए भारत ने आर्यभट की महानता को पहचान लिया है। अब तो पढ़े-लिखे लोग ही नहीं, गाँवों के अनपढ़ लोगों के मुँह से भी आर्यभट का नाम सुनने को मिल जाता है।

रात के समय आकाश में किसी चलते सितारे को देखकर किसान भी बोल उठते हैं—देखो तो ! कहीं वह हमारा **आर्यभट** तो नहीं जा रहा है ?

आर्यभट—प्राचीन भारत के एक महान वैज्ञानिक। आर्यभट—आधुनिक भारत का पहला कृत्रिम चंद्र।

आसमान में आर्यभट

आकाश में कई ग्रह हैं, बहुत सारे तारे हैं। ग्रहों और तारों को पुराने जमाने में जो नाम दिए गए थे वे देवी-देवताओं के नाम हैं। बहुत-से तारों को पौराणिक पुरुषों के नाम दिए गए हैं। पुराणों में इनके बारे में दिलचस्प कथाएँ पढ़ने को मिलती हैं। ज्यादातर कथाएँ मनगढ़ंत हैं।

दूरबीन की खोज हुई, तो आकाश में नए-नए ग्रहों, चंद्रों और तारों की खोज होने लगी। पिछले करीब ढाई सौ सालों में मंगल और बृहस्पति ग्रह के बीच में दो हजार से भी अधिक छोटे-छोटे ग्रह खोजे गए। आरंभ में इनमें से बहुतों को काल्पनिक देवी-देवताओं के नाम दिए गए। बाद में देवी-देवताओं का खजाना भी खाली होने लगा, तो सिर्फ संख्याओं से इनकी पहचान होने लगी।

पुराने जमाने में किसी को भी यह नहीं सूझा कि आकाश के ग्रहों और तारों को महापुरुषों के नाम भी दिए जा सकते हैं। आज से करीब सत्तर साल पहले, पहली बार, एक छोटे ग्रह को एक आदमी का नाम दिया गया। यह आदमी था स्पेन देश की आजादी के लिए शहीद होनेवाला

हिडाल्गो नाम का एक वीर।

उसके बाद भी आकाश में नए खोजे गए पिंडों को देवी-देवताओं के ही नाम दिए जाते रहे। 1930 में आकाश में एक नया ग्रह खोजा गया। इसे प्लूटो यानी यमराज का नाम दिया गया!

सन् 1957 में एक नए युग की शुरुआत हुई। पहली बार आकाश में एक कृत्रिम उपग्रह यानी चंद्र छोड़ा गया। इसके बाद पिछले करीब तीन दशकों में चार हजार से भी अधिक उपग्रह आकाश में छोड़े गए। धरती के मानव चंद्रमा तक पहुँचकर वापस लौट आए हैं। दूसरे ग्रहों तक भी अंतरिक्षयान भेजे गए हैं।

परंतु इनमें से किसी भी राकेट, उपग्रह या अंतरिक्षयान को किसी ऐतिहासिक व्यक्ति का नाम नहीं दिया गया। इन्हें अधिकतर देवी-देवताओं के ही नाम देने की प्रथा जारी रही। इस परंपरा को पहली बार तोड़ा हमारे देश के वैज्ञानिकों ने।

भारत के वैज्ञानिकों ने अपना एक उपग्रह तैयार किया। 19 अप्रैल, 1975 को सोवियत संघ के एक राकेट की मदद से भारत के इस उपग्रह को आकाश में छोड़ा गया।

भारत के इस पहले कृत्रिम चंद्र को नाम दिया गया—**आर्यभट** । सारे संसार में आर्यभट का नाम गूँज उठा । बहुतों को तो पहली बार यह नाम सुनने को मिला । कई लोग एक-दूसरे से पूछने लगे—कौन था आर्यभट ? बहुतों ने ब्रह्मगुप्त, वराहमिहिर और भास्कराचार्य के नाम सुन रखे थे, परंतु नहीं जानते थे कि इनसे भी पहले हमारे देश में आर्यभट नाम के कोई महान गणितज्ञ ज्योतिषी हुए हैं । इसलिए सभी लोग आर्यभट के बारे में जानने के लिए उतावले हो उठे । आर्यभट के बारे में लोगों को थोड़ी-बहुत जानकारी मिलने लगी
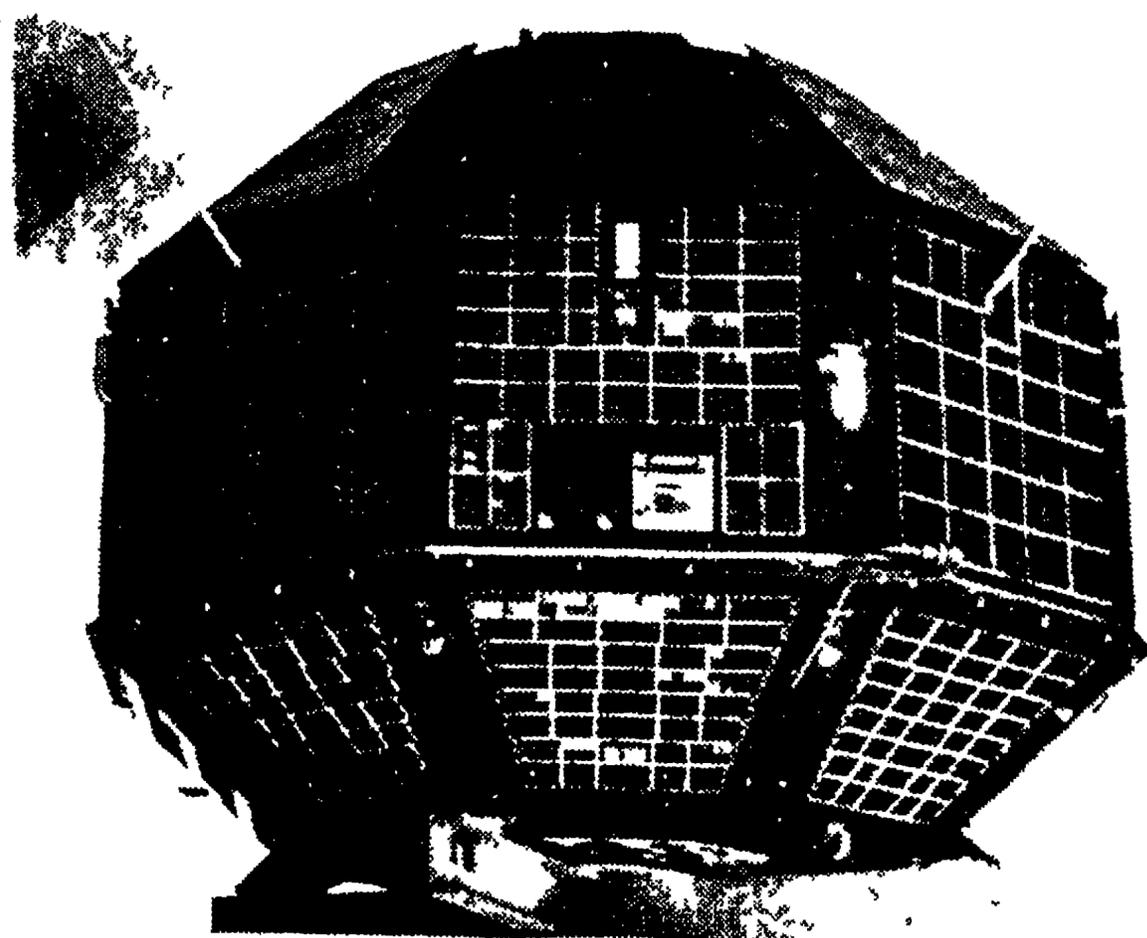
आर्यभट—उपग्रह

फिर उसके एक साल बाद ही आर्यभट को याद करनें का एक और बढ़िया मौका मिला । यह सन् 1976 की बात है ।

याद कीजिए कि आर्यभट का जन्म किस साल हुआ था । आर्यभट का जन्म 476 ई. में हुआ था । सन् 1976 में आर्यभट की 1500वीं जयंती मनाई गई । इस मौके पर दिल्ली में एक बड़ा समारोह हुआ । इसमें देश-विदेश के विद्वानों ने भाग लिया । इन विद्वानों ने आर्यभट के बारे में नई-नई जानकारी दी । इसी मौके पर हमारे देश की विज्ञान अकादमी ने आर्यभट के ग्रंथ को दो-तीन संस्करणों में बढ़िया रूप में प्रकाशित किया । मूल 'आर्यभटीय' और इसका हिंदी अनुवाद भी प्रकाशित किया । भारत के डाक-तार विभाग ने आर्यभट उपग्रह का एक टिकट भी जारी किया ।

आर्यभट का नाम तो मशहूर हो गया, पर अब भी बहुत-से लोग नहीं बता सकते कि आर्यभट ने किन-किन नई बातों की खोज की थी ।

एक शब्द की यूरोप-यात्रा

एक बात तो यही है कि आर्यभट की पुस्तक को समझना सरल नहीं है। उनके बाद इन्हीं विषयों पर दूसरे ज्योतिषियों ने सरल पुस्तकें लिखीं। वे पुस्तकें अधिक प्रसिद्ध हुईं। मिसाल के तौर पर, भास्कराचार्य की **लीलावती** पुस्तक को लीजिए। भास्कराचार्य आर्यभट के कोई छह सौ साल बाद हुए। उनकी लीलावती पुस्तक हमारे समय तक संस्कृत की पाठशालाओं में पढ़ाई जाती रही। इसलिए बड़े-बूढ़े लोग आज भी लीलावती का नाम लेते रहते हैं। बड़े-बूढ़े लोग आज भी लीलावती के पहेलीनुमा सवाल नए विद्यार्थियों को सुनाते रहते हैं। इसीलिए बहुतों को भास्कराचार्य का नाम भी याद रहा।

आर्यभट का ग्रंथ भिन्न किस्म का है। किसी पंडित के पास बैठकर ही उस ग्रंथ को समझा जा सकता है। बाद में सरल ग्रंथ लिखे गए, इसलिए भी पिछली कुछ सदियों में आर्यभट के ग्रंथ को लगभग भुला दिया गया था।

पर आर्यभट की खोजों को कौन मिटा सकता था? आर्यभट के मतों का देश में ही नहीं, विदेशों

में भी प्रचार हुआ था। आज से एक हजार साल पहले अरब देशों में आर्यभट का नाम बड़े आदर से लिया जाता था। अरबी ग्रंथों में **अर्जबहर** के नाम से कई जगहों पर उनका उल्लेख है। मध्यएशिया के मशहूर महापंडित अलबेरूनी ने आर्यभट की खूब प्रशंसा की है।

अरबी पंडितों ने ही भारतीय विज्ञान की बातों को यूरोप पहुँचाया था। ज्योतिष और गणित के अनेक ग्रंथों के अनुवाद शुरू में अरबी भाषा में हुए थे। फिर इन्हीं ग्रंथों के यूरोप की भाषाओं में अनुवाद हुए। इस प्रकार भारत के ज्ञान-विज्ञान का यूरोप में प्रचार हुआ।

भारत के विज्ञान की बातें यूरोप में कैसे पहुँचीं, यह जानने के लिए हम एक शब्द पर विचार करेंगे। यह एक शब्द की कहानी है।

रेखागणित का एक शब्द है **जीवा**।[21] यहाँ हमें इस गहराई में नहीं जाना है कि इस जीवा का मतलब क्या है। बस, समझ लीजिए कि एक खास प्रकार की रेखा का नाम जीवा है। गणित व ज्योतिष के ग्रंथों में यह शब्द अवश्य देखने को मिल जाता है।

हमारे ज्योतिष के ग्रंथ अरब देशों में पहुँचे।

इन ग्रंथों का अरबी भाषा में अनुवाद होने लगा। अनुवादकों के सामने यह **जीवा** शब्द आया, तो वह रुक गए। वह जानते थे कि इस जीवा शब्द का ठीक-ठीक अर्थ क्या है। लेकिन यह एक खास शब्द था, इसका एक खास अर्थ था, यह एक पारिभाषिक शब्द था। इसलिए उन्होंने संस्कृत के इस शब्द का अरबी में तर्जुमा नहीं किया। इसी संस्कृत शब्द को ज्यों-का-त्यों अपना लिया।

अरबी लिपि में स्वर-अक्षर नहीं हैं। यानी ई, उ आदि के लिए उसमें अक्षर नहीं हैं। इसलिए **जीवा** शब्द को अरबी में **ज-ब** के रूप में ही लिखा गया।

अरबी विद्वान जब इस **ज-ब** शब्द को पढ़ते थे, तो समझ जाते थे कि यह एक खास शब्द है, यह भारतीय शब्द है, और इसका खास अर्थ है।

बाद में अरबी ग्रंथ यूरोप में पहुँचे। अरबी ग्रंथों के यूरोप की लैटिन भाषा में अनुवाद होने लगे। यूरोप के विद्वानों के सामने यह **ज-ब** शब्द आया, तो वे अचरज में पड़ गए।

क्या अर्थ है इस शब्द का? वह नहीं जानते थे कि यह शब्द दरअसल संस्कृत भाषा का है। उन्होंने समझा कि यह शब्द भी अरबी भाषा का

ही है । इस **ज-ब** शब्द में स्वर भरने के बाद इसे कई प्रकार से समझा जा सकता है; जैसे, जैब, जेब आदि ।

यूरोप के अनुवादकों ने मान लिया कि **ज-ब** शब्द अरबी का **जेब** शब्द ही हो सकता है । जेब शब्द का अर्थ होता है पाकिट या खीसा । उस जमाने में अरब लोग अपने कुरते का पाकिट अपनी छाती के पास बनाते थे । इसलिए इस जेब शब्द का दूसरा अर्थ छाती भी होता था ।

बस, फिर क्या था, **ज-ब** शब्द का तर्जुमा हुआ छाती । लैटिन भाषा में छाती के लिए शब्द है **सिनुस्** । बाद में इसी सिनुस् शब्द का संक्षिप्त रूप बना—**साइन्** ।

दुनिया भर के कालेजों में आज गणित पढ़नेवाले विद्यार्थी इस साइन् शब्द से भली-भाँति परिचित हैं । पर कितने विद्यार्थी और कितने अध्यापक यह जानते हैं कि आधुनिक गणितशास्त्र का यह **साइन्** शब्द दरअसल संस्कृत के जीवा शब्द से बना है ?

यह हुई एक शब्द की कहानी । यूरोप की भाषाओं में ऐसे कई शब्द हैं जो भारत से वहाँ पहुँचे हैं । ज्ञान-विज्ञान की ऐसी अनेक बातें हैं जो भारत से वहाँ पहुँची हैं ।

अक्षर बने अंक

स्कूलों की उच्च कक्षाओं और कालेजों में गणित का एक विषय पढ़ाया जाता है **त्रिकोणमिति**। इसके बारे में सिर्फ इतना ही जान लीजिए कि यह रेखागणित के आगे का विषय है। आज दुनिया भर में जिस तरीके से यह विषय पढ़ाया जाता है उसकी खोज आर्यभट ने की थी। आर्यभट के ग्रंथ में पहली बार हमें यह तरीका देखने को मिलता है।[22]

जब कोई गणितज्ञ गणित का कोई नया हल या सूत्र खोजता है, तो उसके साथ उसका नाम भी जुड़ जाता है। जैसे पाइथेगोरस का प्रमेय, भास्कराचार्य का सूत्र आदि।

ऊपर त्रिकोणमिति के जिस तरीके का हमने जिक्र किया है उसके साथ भी आर्यभट का नाम जुड़ना चाहिए था। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। वजह यह है कि यूरोप के विद्वानों ने भारतीय खोज को तो अपना लिया, लेकिन उन्हें यह जानकारी नहीं थी कि आर्यभट ने इसकी खोज की है। हम ही अपने इस महान वैज्ञानिक को लगभग भूल गए थे. तो उनको क्या दोष दें ? हाँ, आज हम उस

विधि या तरीके के साथ आर्यभट का नाम जोड़ सकते हैं।

आर्यभट की खोजी हुई त्रिकोणमिति की विधि आज भी इस्तेमाल होती है, सारे संसार में इस्तेमाल होती है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि आर्यभट की हर विधि आज भी उपयोगी है और आर्यभट की पुस्तक आज भी स्कूल-कालेजों में पढ़ाई जा सकती है। ऐसी बात नहीं है।

मिसाल के तौर पर, यही बात देखिए कि आर्यभट ने अपनी पुस्तक में संख्याओं को किस प्रकार लिखा है। पुस्तक कविता में है, इसलिए जाहिर है कि उसमें अंकों को नहीं लिखा जा सकता था। दूसरी ओर, हम यह भी जानते हैं कि अंकों और संख्याओं के बिना गणित और ज्योतिष की पुस्तक नहीं लिखी जा सकती है। गणित और ज्योतिष की पुस्तक में संख्याओं की भरमार रहती है। आर्यभट संख्याओं को शब्दों में भी लिख सकते थे, लेकिन तब उनकी पुस्तक बहुत बड़ी हो जाती।

आर्यभट को एक उपाय सूझा। उन्होंने बड़ी-बड़ी संख्याओं को छोटे-छोटे शब्दों में लिखने का नया तरीका खोज निकाला। बड़ी

अद्‌भुत थी यह खोज।

आर्यभट ने अक्षरों को ही अंक मान लिया। जैसे क को 1, ख को 2, ग को 3 इत्यादि। स्वरों को उन्होंने सौ हजार, दस हजार आदि के बढ़ते मान दिए। इस प्रकार व्यंजनों और स्वरों के मेलजोल से बड़ी-से-बड़ी संख्या लिखने का एक नया तरीका खोज निकाला। इसके लिए उन्होंने एक नियम भी दिया। अपने ग्रंथ के आरंभ में सिर्फ एक श्लोक में ही उन्होंने इस पूरे नियम की जानकारी दी है।[23]

इस तरीके के अनुसार बड़ी-बड़ी संख्याएँ छोटे शब्दों में लिखी जा सकती हैं। दरअसल, इन्हें शब्द कहना ठीक नहीं है। अलग से इनका कोई अर्थ भी नहीं है। उदाहरण के तौर पर, **ख्युघृ** शब्द को लीजिए। आर्यभट के तरीके के अनुसार इस शब्द का अर्थ है4320000। इसी प्रकार **बुफिनच** शब्द का मतलब है232226 संख्या।

आर्यभट ने अपने समूचे ग्रंथ में संख्याओं को इसी प्रकार शब्दों में लिखा है। इसलिए भी आर्यभट के ग्रंथ को समझने में कठिनाई होती है। आर्यभट के ग्रंथ को समझने के लिए पहले उनके संख्याएँ लिखने के तरीके को खूब अच्छी तरह

समझना जरूरी है।

आर्यभट का यह तरीका सरल नहीं है। इसमें अनेक दिक्कतें थीं, इसीलिए बाद के गणितज्ञों ने इसे नहीं अपनाया। बाद के गणितज्ञों ने अक्षरों या शब्दों की सहायता से संख्याएँ लिखने के नए-नए आसान तरीके खोज निकाले।

लेकिन इससे आर्यभट की खोज का महत्त्व नहीं घटता। यह तरीका खोज निकालने वाले आर्यभट भारत के पहले गणितज्ञ हैं। हम जानते हैं कि आर्यभट से भी सदियों पहले यूनानी गणितज्ञ संख्याएँ लिखने के लिए यूनानी अक्षरों का इस्तेमाल करते थे। इसलिए कुछ विद्वानों का यह भी मत है कि अक्षरों से संख्याएँ लिखने का यह तरीका आर्यभट ने यूनानियों से सीखा था।

आर्यभट ने संख्याएँ लिखने के लिए अक्षरों का सहारा लिया, तो यह नहीं समझना चाहिए कि उस समय अंकों का इस्तेमाल नहीं होता था, कि अंकों की खोज नहीं हुई थी। आर्यभट को अपने ग्रंथ की रचना कविता में करनी थी, इसीलिए लाचार होकर उन्हें यह नया तरीका खोजना पड़ा।

वर्ना, आर्यभट के समय तक हमारे देश में

(1) = 346

(2) = 675

(3) = 715

(4) = 872

(5) = 933
= 187
= 50

(6)

1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

आरम्भिक अभिलेखो में प्रयुक्त नई अक-पद्धति की संख्याएँ

(1) संखेडा से प्राप्त किसी गुर्जर राजा के दानपत्र से (594 ई.)
(2) राष्ट्रकूट शासक दंतिदुर्ग के दानपत्र से (753 ई.)
(3) राष्ट्रकूट शासक शंकरगण के दानपत्र से (793 ई.)
(4) प्रतीहार शासक नागभट के लेख से (815 ई.)
(5) प्रतीहार शासक भोजमिहिर के समय के एक लेख से (876 ई.)
(6) प्रतीहार शासक भोजमिहिर की ग्वालियर-प्रशस्ति से (लगभग 870 ई.)

शून्य सहित केवल दस अंकों से सारी संख्याएँ लिखने की खोज हो चुकी थी। इसमें सबसे बड़ी बात थी शून्य की खोज। वैसे, देखा जाए तो शून्य का अर्थ है 'कुछ नहीं'। लेकिन यही शून्य संख्याओं में कैसी जान फूँकता है, कैसा चमत्कार दिखाता है! दुनिया के किसी भी महात्मा ने ऐसा चमत्कार नहीं दिखाया होगा।

शून्य की खोज, शून्य सहित केवल दस अंकों से तमाम संख्याएँ लिखने की खोज, किसी गणितज्ञ ने ही की होगी। यह खोज हमारे देश में हुई। आज सारे संसार में शून्य पर आधारित दाशमिक स्थानमान पद्धति का ही प्रचलन है।

परिधि और व्यास का अनुपात

प्राचीन भारत में गणित और ज्योतिष को एकदम अलग-अलग विषय नहीं माना जाता था। गणित और ज्योतिष का अध्ययन साथ-साथ होता था। ज्योतिष के अध्ययन के लिए गणित का गहन अध्ययन जरूरी समझा जाता है।

इसलिए प्रायः एक ही पुस्तक में गणित और

ज्योतिष की जानकारी दी जाती थी । आर्यभट का **आर्यभटीय** ग्रंथ भी ऐसा ही है । इसके चार भाग हैं । पहले भाग को **दशगीतिकासूत्र** कहा गया है । वैसे तो इसमें कुल 13 श्लोक हैं, लेकिन इसके दस श्लोकों में आर्यभट ने गणित और ज्योतिष की बुनियादी बातें सूत्र-रूप में लिख दी हैं ।

पुस्तक के दूसरे भाग का नाम है **गणितपाद** । जैसा कि नाम से ही जाहिर है, उसका विषय गणित है । इसमें कुल 33 श्लोक हैं । इतने श्लोकों में ही आर्यभट ने गणित की तमाम मुख्य बातें लिख दी हैं । यह सचमुच ही कमाल की बात है । इसमें कई ऐसी बातें हैं जो पहले-से मालूम थीं । ऐसी भी कुछ बातें हैं जिनकी खोज स्वयं आर्यभट ने की थी । इनमें से एक-दो बातों का जिक्र हम कर चुके हैं । महत्त्व की कुछ और बातें हैं—

गणित में वृत्त की परिधि और व्यास के अनुपात का बड़ा महत्त्व है । आर्यभट के पहले इस अनुपात का मान 3 या $\sqrt{10}$ लिया जाता रहा । मगर आर्यभट ने इस अनुपात के लिए एक अधिक शुद्ध मान प्रस्तुत किया । उनके अनुसार[24]—

$$\frac{\text{परिधि}}{\text{व्यास}} = \frac{62832}{20000} = 3.1416$$

परिधि और व्यास के अनुपात को आज हम यूनानी अक्षर π (पाई) से व्यक्त करते हैं और इसका कामचलाऊ मान $\frac{22}{7}$ या 3.1416 लेते हैं। π एक विशिष्ट प्रकार की संख्या है और आज इलेक्ट्रानिक कंप्यूटर की सहायता से लाखों-करोड़ों दशमलव स्थानों तक इसका मान मालूम किया जा सकता है।

आज से करीब डेढ़ हजार साल पहले आर्यभट ने परिधि और व्यास के अनुपात का जो मान दिया वह चार दशमलव स्थानों तक सही है। महत्त्व की बात यह है कि, वे जानते थे कि यह मान परिपूर्ण नहीं है। उन्होंने इसे **आसन्न** मान कहा है। आसन्न मान क्यों कहा ? इसलिए कि आर्यभट जानते थे कि इस अनुपात (π) का यथार्थ मान जानना असंभव है।

आर्यभट ने अपने ग्रंथ के **गणितपाद** में वर्ग-वर्गमूल, घन-घनमूल, त्रैराशिक, श्रेढ़ियों, क्षेत्रफलों, घनफलों, वर्ग-समीकरण के हल आदि से संबंधित नियम दिए हैं।

गणितपाद के अंतिम दो श्लोक (32 और

33)महत्त्व के हैं। इनका विषय **कुट्टक** है। यह बीजगणित का विषय है। उस समय बीजगणित को कुट्टक के नाम से जाना जाता था। आर्यभट ने इन दो श्लोकों में प्रथम घात के **अनिर्धार्य समीकरण** का हल प्रस्तुत किया है।[25]

आर्यभटीय के तीसरे भाग का नाम **काल-क्रियापाद** है। इसमें कुल 25 श्लोक हैं। इसमें आर्यभट ने काल-विभाजन, युग-पद्धति आदि के बारे में जानकारी दी है। इनमें से कुछ बातों की चर्चा हम पहले कर चुके हैं।

चौथे भाग का नाम **गोलपाद** है। इसमें कुल 50 श्लोक हैं। इसमें गोल से संबंधित गणित की चर्चा है। इसमें आर्यभट ने ग्रहणों के सही कारण दिए हैं।

इस प्रकार, कुल 121 श्लोकों का आर्यभटीय ग्रंथ समाप्त हो जाता है। ग्रंथ के अंत के एक श्लोक में आर्यभट कहते हैं—सत्य और असत्य ज्ञान के समुद्र में सत्य ज्ञान का जो रत्न डूबा हुआ था उसे मैंने देवता के प्रसाद से बुद्धि रूपी नाव की सहायता से बाहर निकाला है।[26]

आर्यभट के ग्रंथ की मदद से आज विद्यार्थियों को गणित और खगोल-विज्ञान नहीं पढ़ाया जा

सकता। पिछले डेढ़ हजार वर्षों में गणित और ज्योतिष ने बहुत तरक्की की है। आर्यभट के जमाने का गणित, कुछ भिन्न तरीकों से, आज भी स्कूलों में पढ़ाया जाता है। मगर ज्योतिष की तो कायापलट ही हो गई है। इसलिए आर्यभट के ग्रंथ में ज्योतिष की जो जानकारी है उसका आज यही महत्त्व है कि हमें आज से डेढ़ हजार साल पहले के भारतीय ज्योतिष के बारे में जानकारी मिल जाती है।

सभी युग समान

बहुत प्राचीन काल में पुरोहित लोग ही ज्योतिषी होते थे। आकाश के ग्रहों और तारों की गतियों का लेखा-जोखा रखते थे। इसलिए वे बता सकते थे कि कौन-सा ग्रह कब कहाँ होगा, ग्रहण कब लगेगा, और कौन-सी ऋतु कब आरंभ होगी।

इन्हीं पुरोहितों से किसानों को ऋतुओं की जानकारी मिलती थी। ये पुरोहित-ज्योतिषी ग्रहणों की भी भविष्यवाणी कर सकते थे, इसलिए लोगों पर इनका बड़ा प्रभाव था।

खेती के लिए ही नहीं, धर्म-कर्म के लिए भी समय की सूचना का बड़ा महत्त्व था। इसलिए भी इन पुरोहितों-ज्योतिषियों का आम जनता पर बड़ा रोब था। पुराने जमाने का ज्योतिष धर्म-कर्म के साथ जुड़ा हुआ था।

हमने पहले **वेदांग-ज्योतिष** नाम के एक पुराने ग्रंथ की चर्चा की है। वेदांग का अर्थ है 'वेद का अंग'। इस ग्रंथ में ज्योतिष की जो बातें हैं उनका ज्यादा संबंध वैदिक यज्ञों से है। ज्योतिष का ग्रंथ होने पर भी यह धर्म-कर्म के साथ अधिक जुड़ा हुआ है। इसी प्रकार वैदिक काल का रेखागणित भी धर्म-कर्म के साथ जुड़ा हुआ था।

आर्यभट के पहले ज्योतिष के और भी कुछ ग्रंथों की रचना हुई थी। इन्हें **सिद्धांत ग्रंथ** कहते हैं। जैसे, **सूर्य-सिद्धांत**, **रोमक-सिद्धांत**, आदि। लेकिन ये पुराने सिद्धांत-ग्रंथ अब नष्ट हो गए हैं।

आर्यभट का गणित और ज्योतिष का ग्रंथ इन पुराने ग्रंथों से भिन्न है। भिन्न इस माने में है कि आर्यभट ने गणित और ज्योतिष को शुद्ध विज्ञान के विषय मानकर इनका अध्ययन पेश किया है। आर्यभट का ज्योतिष धर्म का पिछलग्गू नहीं है। हमने देखा है कि आर्यभट ने धार्मिक विश्वासों

की भी परवाह नहीं की है। यही सबसे बड़ी विशेषता है आर्यभट की।

आर्यभट हमारे देश के पहले महान वैज्ञानिक ज्योतिषी थे। गणित और ज्योतिष के अध्ययन को उन्होंने वैज्ञानिक दृष्टि से प्रस्तुत किया है।

दूसरी ओर, अपने ग्रंथ में आर्यभट ने ऐसी अनेक बातें कही हैं जो उस जमाने के धार्मिक विश्वासों से मेल नहीं खाती थीं।

युगों की बात को ही लीजिए। पुराणों ने, दूसरे धर्मग्रंथों ने, और भारत के अन्य ज्योतिषियों ने भी, एक खास ढंग के चार युगों की कल्पना की है—सतयुग, त्रेतायुग, द्वापर युग और कलियुग। लेकिन इनके अनुसार ये चारों युग समान अवधि के नहीं हैं। इनका कहना है कि सतयुग सबसे अच्छा था, और यह सबसे लंबा था। त्रेता कुछ घटिया था, और द्वापर उससे भी अधिक घटिया। इसलिए त्रेता सतयुग से छोटा है, और द्वापर त्रेता से भी छोटा। पुराण यही बताते हैं। सबसे घटिया है वर्तमान कलियुग। यह सबसे छोटा भी है।

लेकिन आर्यभट ने इन सब कल्पित बातों को नहीं माना। उन्होंने काल की गणना करने के लिए एक **महायुग** की कल्पना की। उन्होंने भी

एक महायुग को 43,20,000 वर्षों का माना। लेकिन इस महायुग को उन्होंने क्रमशः घटते कालों में नहीं बाँटा। उन्होंने चारों युगों को समान कालों में बाँटा। यानी प्रत्येक युग 10,80,000 वर्षों का। इस प्रकार आर्यभट की युग-पद्धति अधिक वैज्ञानिक है।[27] वह नहीं मानते थे कि इन युगों की अवधियों का मनुष्य के जीवन से कोई संबंध है।

कोई आदि अंत नहीं

आर्यभट यह भी नहीं मानते थे कि विश्व की सृष्टि और विनाश होता है।[28] आर्यभट ने ब्रह्मा की आयु-जैसी कल्पनाओं का भी कोई जिक्र नहीं किया है। उनका मकसद था आकाश के ग्रहों और नक्षत्रों की गतियों का वैज्ञानिक अध्ययन करना। आर्यभट ने अपने ग्रंथ में कहीं पर भी यह नहीं कहा है कि आकाश के ये ग्रह और नक्षत्र मनुष्य के जीवन को प्रभावित करते हैं।

पुराने जमाने के हमारे देश के अधिकतर पंडितों का मत था कि यह पृथ्वी पंचमहाभूतों से

बनी है, यानी मिट्टी, पानी, आग, हवा और आकाश के मेल से बनी है।

आर्यभट ने केवल चार भूतों यानी तत्त्वों को माना है। उन्होंने आकाश तत्त्व को नहीं माना।[29]

प्राचीन काल में हमारे देश में ऐसे भी कई विचारक थे जो आर्यभट की तरह केवल चार तत्वों को मानते थे। ये विचारक किसी ईश्वर को नहीं मानते थे। ये विचारक मानते थे कि केवल चार भूतों यानी तत्त्वों के मेलजोल से ही सृष्टि की सारी चीजें बनी हैं।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि आर्यभट एक क्रांतिकारी विचारक भी थे। वे अपने समय से काफी आगे थे। बाद के कुछ ज्योतिषियों ने उनकी सही बातों का भी लोकभय के कारण खंडन किया है। लेकिन इन आलोचकों ने भी उनकी बुद्धि का लोहा माना है।

आर्यभट के कोई सौ साल बाद हमारे देश में **ब्रह्मगुप्त** नाम के एक बड़े गणितज्ञ और ज्योतिषी हुए। ब्रह्मगुप्त ने अपने ग्रंथ में आर्यभट की कड़ी आलोचना की है, फिर भी उन्होंने आर्यभट की बुद्धि का लोहा माना है।

आर्यभट के कोई साढ़े चार सौ साल बाद

हमारे देश में आर्यभट नाम के एक और ज्योतिषी हुए। उनकी एक पुस्तक भी मिलती है। परंतु वे हमारे इस पहले आर्यभट की कोटि के वैज्ञानिक नहीं थे।[30]

किसी समय **आर्यभटीय** ग्रंथ काफी प्रसिद्ध था। उत्तर में कश्मीर से लेकर दक्षिण भारत तक इस ग्रंथ का प्रचार था। अनेक विद्वानों ने आर्यभट के इस ग्रंथ पर टीकाएँ लिखी हैं। कुछ टीकाएँ आज भी मिलती हैं।[31] विरोध के बावजूद आर्यभट की ज्योतिष-परंपरा कायम रही।

नए युग का आरंभ

आर्यभट के साथ हमारे देश में गणित और ज्योतिष के अध्ययन का एक नया युग शुरू हुआ था। वैज्ञानिक अध्ययन की एक स्वस्थ परंपरा शुरू हुई थी। आगे करीब छह सौ वर्षों तक हमारे देश में गणित और ज्योतिष ने खूब तरक्की की। भास्कराचार्य हमारे देश के अंतिम बड़े गणितज्ञ और ज्योतिषी माने जाते हैं। उनके बाद नया बहुत कम खोजा गया।

ऐसा क्यों हुआ ? हमारे देश में विज्ञान की प्रगति क्यों रुक गई ? एक समय यूरोपवालों ने भारतीय ज्ञान से लाभ उठाया था। आज हमें यूरोपवालों से सीखना पड़ रहा है।

इसमें हमारे पुरखों का ही कसूर है। भारतीय पंडित लकीर के फकीर बन गए। पुराने ज्ञान को पत्थर की लकीर समझने लगे। पुराने ज्ञान पर प्रश्नचिह्न लगाने का उनमें साहस नहीं रहा। इस प्रकार ज्ञान-विज्ञान का प्रवाह रुक गया।

आर्यभट ने नया रास्ता दिखाया था। आर्यभट ने दिखा दिया था कि विज्ञान की खोज का रास्ता धार्मिक विश्वासों के रास्ते से जुदा है। आगे के वैज्ञानिक यदि उनके दिखाए मार्ग पर चलते रहते तो संभवतः आज हम बहुत आगे होते।

बीच के काल में हमारे देश ने आर्यभट को भले ही भुला दिया हो, मगर आज हम उनकी महान देन को पुनः पहचानने लगे हैं। वे हमारे देश के एक महान वैज्ञानिक ही नहीं, एक क्रांतिकारी विचारक भी थे।

इसीलिए आज हमने उन्हें आसमान में उठाया है। पुराने जमाने में किसी देवता या पौराणिक पुरुष को अधिक महत्त्व देना होता था,

तो उसे आकाश में स्थान दिया जाता था। किसी ग्रह अथवा तारे को उसका नाम दिया जाता था।

आधुनिक भारत ने अपने एक महान वैज्ञानिक को आकाश में उठाया है। भारत ने अपने पहले कृत्रिम चंद्र को किसी काल्पनिक देवता का नहीं, अपने एक महान वैज्ञानिक का नाम दिया—आर्यभट।

आर्यभट—भारतीय विज्ञान का सबसे चमकीला सितारा!

आर्यभट—नए भारत का पहला कृत्रिम चंद्र!

● ● ●

संदर्भ और टिप्पणियाँ

1. पाटलिपुत्र की स्थापना अजातशत्रु के महामात्य सुनीध और वस्सकार ने, बुद्ध के जीवनकाल में, 480 ई. पू. के आसपास की थी– वज्जियों के आक्रमणों को रोकने के लिए। स्वयं बुद्ध ने पाटलिग्राम में दुर्ग बनते हुए देखा था। मगध की पुरानी राजधानी राजगृह में थी। राजगृह से वैशाली जानेवाले महापथ पर पाटलिग्राम एक प्रमुख पड़ाव था। अजातशत्रु के उत्तराधिकारी के समय में मगध की राजधानी राजगृह से पाटलिपुत्र में स्थानांतरित हुई।

   पाटलिपुत्र का निर्माण गंगा, गंडक और सोन नदियों के संगम के समीप हुआ था। मगर अब सोन नदी वहाँ से दूर हट गई है।

   चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में सेल्यूकस निकेटर के यवन-दूत मेगस्थनीज ने पाटलिपुत्र के बारे में जो जानकारी दी है उसकी पुरातात्विक खुदाई से पुष्टि हुई है। कुम्हरार और बुलंदीबाग से मौर्यकालीन अवशेष मिले हैं। मेगस्थनीज जानकारी देता है कि नगर नदीतट के साथ-साथ चार किलोमीटर तक फैला हुआ था और पुश्तों, जलपूरित परिखाओं तथा प्रबल प्राचीरों से घिरा हुआ था। सागौन के शहतीरों को बाड़ की तरह खड़ा करके प्राचीर को बनाया गया था। नगर-प्राचीर में 64 द्वार बने हुए थे।

पाटलिपुत्र उत्तरकालीन शिशुनागों, नदो और महान मौर्य सम्राटों की राजधानी थी। समुद्रगुप्त तक इसका वैभव बना रहा। फाहियान ईसा की पाँचवीं सदी में पाटलिपुत्र को देखकर बड़ा प्रभावित हुआ था। मगर हर्षवर्धन के समय में युवान-च्वाङ् ने प्राचीन पाटलिपुत्र को एक वीरान नगर के रूप में देखा था।

बुद्ध ने कहा था कि पाटलिपुत्र वणिक्-पथों का प्रमुख नगर बनेगा। साथ ही, यह भविष्यवाणी भी की थी कि पाटलिपुत्र के विनाश के तीन कारण होंगे—आग, पानी और आपस की फूट। संभवतः आग से ही पाटलिपुत्र के प्रासादों, भवनों और प्राचीरों का विनाश हुआ, क्योंकि उनमें प्रमुखतः लकड़ी का इस्तेमाल हुआ था। कुम्हरार या कुमरार से, जो संभवतः कुसुमपुर का अपभ्रंश है, पाटलिपुत्र के अवशेष मिले हैं।

कवि विशाखदत्त, जिनका समय ईसा की छठी सदी है, अपने नाटक **मुद्राराक्षस** में सूचना देते हैं कि कुसुमपुर (पाटलिपुत्र) में राजा तथा धनी-मानी लोगों का निवास था (प्रथम और षष्ठ अंक)। विशाखदत्त को पाटलिपुत्र के आसपास के क्षेत्र का अच्छा ज्ञान था। महत्त्व की बात यह है कि विशाखदत्त या तो आर्यभट के समकालीन थे या उनके कुछ ही साल बाद हुए।

2. बुद्धकालीन 16 जनपदों में एक था अश्मक (अस्सक)। यह जनपद दक्षिण में गोदावरी तट के आसपास था और इसकी राजधानी पतिट्ठान (प्रतिष्ठान, पैठण) में थी। श्रावस्ती का बावरी नामक ब्राह्मण अपने 16 शिष्यों के साथ अश्मक देश जाकर बस गया था। वैदिक धर्म- प्रचारकों का यह

दक्षिण में संभवत: पहला उपनिवेश था। बाद मे बावरी के 16 शिष्य बुद्ध का दर्शन करने और उनका उपदेश सुनने राजगृह पहुँचे थे।

कौटिल्य के **अर्थशास्त्र** में जिस अश्मक प्रदेश का उल्लेख है वह भी महाराष्ट्र में था। **दशकुमारचरित** के रचनाकार दंडिन्, जिनका समय ईसा की सातवीं सदी है, अश्मक राज्य को विदर्भ (महाराष्ट्र) के अंतर्गत रखते हैं।

3. छादयति शशी सूर्य शशिनं महती च भूच्छाया।। 37।।

—गोलपाद, आर्यभटीय।

अर्थात्, (सूर्य-ग्रहण के अवसर पर) सूर्य को चद्रमा ढक लेता है और (चंद्र-ग्रहण के अवसर पर) पृथ्वी की बड़ी छाया चंद्रमा को ढक लेती है।

4. आर्यभट को आज भी बहुत-से लोग आर्यभट्ट लिखते हैं। उनकी समझ है कि **भट** शब्द भाट का सूचक है और भट्ट शब्द ब्राह्मण-पंडित का! परंतु 'भट' का वास्तविक अर्थ 'योद्धा' है। आर्यभट के टीकाकारों ने और बाद के सभी ज्योतिषियों ने उन्हें आर्यभट ही कहा है।
5. आर्यभट अश्मक देश (संभवत: विदर्भ, महाराष्ट्र) के निवासी थे, इसलिए उनके टीकाकार **भास्कर-प्रथम** और **नीलकंठ** ने उन्हें **आश्मकाचार्य**, उनके ग्रंथ को **आश्मक-तंत्र** और उनके अनुयायियों को **आश्मकीयाः** कहा है।
6. पृथूदकस्वामी, जिन्होंने ब्रह्मगुप्त के **ब्राह्मस्फुट-सिद्धांत** पर भाष्य लिखा है, आर्यभट की एक आर्या उद्धृत करते हैं—

भपंजरः स्थिरो भूरेवावृत्यावृत्य प्रातिदैवसिकौ।
उदयास्तमयौ संपादयति नक्षत्रग्रहाणाम्।।

अर्थात्, तारामंडल स्थिर है और पृथ्वी अपनी दैनिक घूमने की गति से नक्षत्रों तथा ग्रहों का उदय और अस्त करती है।

यह आर्या आर्यभट के किसी अन्य ग्रथ मे है, जो आज उपलब्ध नहीं है।

7. अनुलोमगतिर्नौस्थ : पश्यत्यचल विलोमगं यद्वत्।
अचलानि भानि तद्वत् समपश्चिमगानि
लंकायाम्।। 9।।
उदयास्तमयनिमित्तं नित्यं प्रवहेण वायुना क्षिप्तः।
लंकासमपश्चिमगो भपंजरः सग्रहो भ्रमति।। 10।।
—गोलपाद, आर्यभटीय।

—जिस तरह नाव में बैठा हुआ कोई मनुष्य जब पूर्व दिशा में जाता है तब तट की अचल वस्तुओं को उलटी दिशा मे जाता हुआ अनुभव करता है, उसी तरह अचल तारागण लंका में पश्चिम की ओर जाते प्रतीत होते हैं। (अतः ऐसा भास होता है कि)तारामडल तथा ग्रहो के उदय तथा अस्त के लिए वे नित्य ही प्रवह वायु द्वारा चलाए जाकर लंका में ठीक पश्चिम दिशा मे भ्रमण कर रहे हैं।

इससे स्पष्ट है कि आर्यभट के अनुसार, पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है और तारामंडल स्थिर है। बाद के एक ज्योतिषी नृसिह ने लिखा है कि आर्यभट प्रवह वायु की कल्पना को व्यर्थ मानते थे (प्रवहानिलकल्पना व्यर्था)।

8. आर्यभट ने स्पष्ट लिखा है : **प्राणेनैति कलां भूः** अर्थात्, एक प्राण समय में पृथ्वी एक कला घूमती है (एक दिन में 21600 प्राण और एक चक्र में 21600 कलाएँ मानी गई थीं)।

आर्यभट के भास्कर-प्रथम (सातवीं सदी, पूर्वार्ध) से लेकर नीलकंठ (सोलहवीं सदी) तक के सभी भाष्यकारों ने,

लोकभय के कारण, उनके **प्राणेनैति कलां भूः** को **प्राणेनैति कलां भं** (भूः यानी पृथ्वी को भं यानी तारामंडल) में बदलकर व्याख्या की है। मगर मक्कीभट्ट (1377 ई.) ने आर्यभट के मत का समर्थन किया है।

मक्कीभट्ट की तरह कई ज्योतिषी आर्यभट के मत के समर्थक रहे होंगे, इसीलिए कट्टर वेदांती अप्पय दीक्षित (1530-1600) ने लिखा है: **आर्यभटाद्यभिमत-भूभ्रमणादिवादानां श्रुतिन्यायविरोधेन हेयत्वात्**; अर्थात्, आर्यभट आदि द्वारा प्रतिपादित भूभ्रमण का वाद श्रुति और न्याय के विरुद्ध होने के कारण हेय है।

जब भारत में अप्पय दीक्षित-जैसे वेदांती आर्यभट के भूभ्रमणवाद को हेय करार दे रहे थे, तब यूरोप में कोपर्निकस के सूर्यकेंद्रवाद की स्थापना हो चुकी थी और ज्योर्दानो ब्रूनो (1547-1600) घूम-घूमकर यूरोप के नगरों में उस सिद्धांत का प्रचार कर रहे थे।

9. वराहमिहिर का जन्म पाँचवीं सदी के अंतिम दशकों में उज्जयिनी के समीप के कांपिल्लक नगर में हुआ था। वे सूर्य के उपासक थे। उनके पिता आदित्यदास ही उनके गुरु थे। वराह अवंती देश (उज्जयिनी) के किसी राजा के आश्रय में रहे।

   वराह ने 505 ई. में अपने **पंचसिद्धांतिका** ग्रंथ की रचना की। इस ग्रंथ में उन्होंने ज्योतिष के पुराने पाँच सिद्धांत-ग्रंथों—पितामह-सिद्धांत, वसिष्ठ- सिद्धांत, रोमक-सिद्धांत, पुलिश-सिद्धांत और सूर्य- सिद्धांत—की जानकारी दी है, इसलिए ऐतिहासिक दृष्टि से इस कृति का बड़ा महत्त्व है। वराह ने जिस सूर्य-सिद्धांत की जानकारी दी है वह आज

उपलब्ध नहीं है। नया सूर्य-सिद्धांत वराह के बाद लिखा गया।

वराह को यूनानी ज्योतिष का अच्छा ज्ञान था। वे यूनानियों के ज्योतिष-ज्ञान के प्रशंसक थे। उन्होंने कई यूनानी शब्दों को संस्कृत में अपनाया।

वराह के अन्य ग्रंथ हैं—बृहज्जातक, विवाह- पटल, योगयात्रा और बृहत्संहित। इनमें **बृहत्संहिता** एक प्रकार से अपने समय का ज्ञान कोश ही है।

10. आर्यभटीय ग्रंथ चार भागों में विभक्त है—

1. दशगीतिका	10+3	श्लोक
2. गणितपाद	33	,,
3. कालक्रिया	25	,,
4. गोलपाद	50	,,
कुल	121	श्लोक

प्रथम भाग में गीतिका छंद के दस श्लोकों (दश-गीतिका) के अलावा तीन श्लोक और हैं। प्रथम श्लोक में ब्रह्मा की वंदना करने के बाद आर्यभट कहते हैं कि वे गणित, कालक्रिया और गोल का वर्णन करते हैं। दूसरे श्लोक में उन्होंने अपनी नई अक्षरांक-पद्धति के नियमों को सूत्रबद्ध किया है। अंतिम श्लोक में दशगीतिका के सूत्रों के महत्त्व को बतलाकर ब्रह्मा को स्मरण किया गया है।

आर्यभटीय के शेष तीन भाग—गणित, कालक्रिया और गोल—आर्या छंद में हैं और उनकी कुल संख्या 108 है, इसलिए ये **आर्याष्टशत** के नाम से भी जाने जाते हैं।

11. आर्यभट के पहले ही शून्य की धारणा पर आधारित **दाशमिक स्थानमान अंक-पद्धति** की खोज भारत में हो चुकी थी, यद्यपि अभिलेखों में इसका पहला प्रमाण एक गुर्जर राजा के कलचूरि-संवत् 346 (594 ई.) के एक ताम्रपत्र में मिलता है।
आर्यभटीय के गणितपाद का दूसरा श्लोक है—

एकं च दशं च शतं च सहस्रमयुतनियुते तथा प्रयुतम्।
कोट्यर्बुद च वृंदं स्थानात् स्थान दशगुणं स्यात्॥

अर्थात्, एक, दश, शत, सहस्र, अयुत (10000), नियुत (100000), प्रयुत (1000000), कोटि (10000000), अर्बुद (100000000), वृंद (1000000000) में प्रत्येक स्थान अपने पिछले स्थान से दस गुना है।

अतः स्पष्ट है कि आर्यभट दाशमिक स्थानमान अंक-पद्धति से परिचित थे।

12. **वेदांग-ज्योतिष** दो रूपों में उपलब्ध है—ऋग्वेद- वेदांग ज्योतिष और यजुर्वेद-वेदाग-ज्योतिष। पहले में 36 श्लोक हैं और इसी का ज्यादा प्रचलन रहा है। दूसरे में 43 श्लोक हैं। दोनों में कई श्लोक एक-समान हैं। महात्मा लगध को वेदांग-ज्योतिष का रचनाकार माना जाता है। वे संभवतः कश्मीर के निवासी थे।

वेदांग-ज्योतिष के कई श्लोकों का अर्थ अभी स्पष्ट नहीं हुआ है। वेदांग-ज्योतिष में पाँच वर्ष का युग माना गया है। इस पुस्तक की रचना लगभग 800 ई.पू. में हुई होगी।

13. देखिए, टिप्पणी 4.
14. देखिए, टिप्पणियाँ 2 और 5.

15. आर्यभट के जन्म 476 ई. के एक साल बाद बुधगुप्त सिंहासनारूढ़ हुआ। बुधगुप्त की मृत्यु 500 ई. के आसपास हुई। उसके बाद बुधगुप्त के भाई नरसिंहगुप्त और उसके पुत्र-पौत्र ने शासन किया—570 ई. तक। साथ ही, हम बंगाल से 507 ई. में वैन्यगुप्त को और एरण (मध्य-प्रदेश) से 510 ई. में भानुगुप्त को शासन करते देखते हैं। श्वेत-हूणों के हमले हो रहे थे और वह गुप्त साम्राज्य के विघटन का काल था।
16. षष्ट्यब्दानां षष्टिर्यदा व्यतीतास्त्रयश्च युगपादाः। त्र्यधिका विंशतिरब्दास्तदेह मम जन्मनोऽतीताः ।। 10 ।।
—कालक्रियापाद, आर्यभटीय
17. ब्रह्मगुप्त का जन्म 598 ई. में हुआ था। वे उत्तर गुजरात की तत्कालीन राजधानी भिन्नमाल (आधुनिक भीनमाल, जालौर जिला, राजस्थान) के निवासी थे। ब्रह्मगुप्त के समय में वहाँ चापवंश के व्याघ्रमुख राजा का शासन था। ब्रह्मगुप्त के पिता का नाम जिष्णु था।

ब्रह्मगुप्त के दो ग्रंथ उपलब्ध हैं—**ब्राह्मस्फुट-सिद्धांत** और **खंड-खाद्यक**। पहले ग्रंथ में ब्रह्मगुप्त ने आर्यभट की कटु आलोचना की है। इसके लिए उन्होंने अपने ग्रंथ में एक स्वतंत्र अध्याय (दूषणाध्याय) ही लिखा। मगर बाद में उन्होंने अपने खंड-खाद्यक में आर्यभट की स्तुति की है।
18. भास्कराचार्य का जन्म दक्षिणापथ के सह्याद्रि अंचल में 1114 ई. में हुआ था। छत्तीस साल की आयु में, 1150 ई. में, उन्होंने **सिद्धांत-शिरोमणि** की रचना की, जिसमें चार पुस्तकें हैं— **लीलावती**, **बीजगणित**, **गोलाध्याय** और

ग्रहगणित। भास्कर ने 69 साल की आयु में **करण-कुतूहल** ग्रंथ लिखा।

विस्तृत जानकारी के लिए देखिए मेरी **भास्कराचार्य** पुस्तक।

19. कई ज्योतिषियों के उल्लेखों से पता चलता है कि आर्यभट ने कम-से-कम एक ग्रंथ और लिखा था, जिसका नाम संभवतः **आर्यभट-सिद्धांत** था। आर्यभटीय में एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक के काल को दिन माना गया है, मगर आर्यभट-सिद्धांत में एक मध्यरात्रि से दूसरी मध्यरात्रि तक के काल को दिन माना गया था।

20. उन्नीसवीं सदी के मध्यकाल तक आधुनिक विद्वानों को आर्यभटीय की हस्तलिपि नहीं मिली थी। कोलब्रूक को आर्यभटीय की प्रति नहीं मिली थी; उन्होंने अन्य उल्लेखों के

भाऊ दाजी

आधार पर ही आर्यभट की चर्चा की थी। ईसा की ग्यारहवीं सदी में अल्-बेरूनी ने लिखा था—'आर्यभट के बारे में मेरी सारी जानकारी ब्रह्मगुप्त के उद्धरणों पर आधारित है।'

महाराष्ट्र के विद्वान डा. भाऊ दाजी (1822-74) ने केरल में 1864 में नए सिरे से आर्यभटीय की मलयालम लिपि में ताड़पत्र पोथियाँ खोजीं और उनका विवरण प्रस्तुत किया। उसके बाद आर्यभटीय की और भी कुछ हस्तलिपियाँ मिलीं और उनका संपादन-प्रकाशन हुआ।

21. वृत्त की परिधि के रेखाखंड को **चाप** कहते हैं। चाप के दो सिरों को जोड़ने वाली रेखा **जीवा** कहलाती है।

22. त्रिकोणमिति में त्रिभुज के तीन कोणों और उसकी तीन भुजाओं के संबंधों का गणित होता है।

    आज त्रिकोणमिति हिप्पार्कस और तालेमी के तरीकों से नहीं, बल्कि आर्यभट की अर्धज्या की विधि से पढ़ाई जाती है।

23. श्लोक है—

    वर्गाक्षराणि वर्गेऽवर्गेऽवर्गाक्षराणि कात् ङ्मौ यः।
    खद्विनवके स्वरा नव वर्गेऽवर्गेनवान्त्यवर्गे वा।।

    —द्वितीय श्लोक, दशगीतिका, आर्यभटीय।

    इस श्लोक के अनुसार—25 वर्ग अक्षरों के मान :

क् = 1	च् = 6	ट् = 11	त् = 16	प् = 21
ख् = 2	छ् = 7	ठ् = 12	थ् = 17	फ् = 22
ग् = 3	ज् = 8	ड् = 13	द् = 18	ब् = 23
घ् = 4	झ् = 9	ढ् = 14	ध् = 19	भ् = 24
ङ् = 5	ञ् = 10	ण् = 15	न् = 20	म् = 25

आठ अवर्ग अक्षरों के मान :

य्	=	30	श्	=	70
र्	=	40	ष्	=	80
ल्	=	50	स्	=	90
व्	=	60	ह्	=	100

और नौ स्वरों के मान :

अ	=	1	लृ	=	100000000
इ	=	100	ए	=	10000000000
उ	=	10000	ऐ	=	1000000000000
ऋ	=	1000000	ओ	=	100000000000000
			औ	=	10000000000000000

इस अक्षरांक-पद्धति में ह्रस्व और दीर्घ स्वरों में भेद नहीं किया गया है । जहाँ व्यंजन के साथ स्वर मिला हुआ है वहाँ समझना चाहिए कि व्यंजनांक के साथ स्वरांक का गुणन हुआ है । जैसे, कु = क् + उ = 1×10000 = 10000 और ङि = ङ् + इ = 5 × 100 = 500 ।

जहाँ संयुक्त व्यंजन के साथ स्वर मिला हो, वहाँ समझना चाहिए कि वह स्वर उस संयुक्त व्यंजन के प्रत्येक घटक के साथ मिला हुआ है । जैसे, ख्षृ=(ख्+ऋ) + (ष्+ऋ) = (2 × 1000000) + (80×1000000) = 82000000 ।

एक उदाहरण : आर्यभट कहते हैं **कु** यानी पृथ्वी एक महायुग में **ङिशिबुण्लृख्षृ**' बार घूमती है । अर्थात्,

ङि=ङ्+इ	= 5×100	= 500
शि = श्+इ	= 70×100	= 7000

बु = ब्+उ	= 23×10000	= 230000
ण्लृ = ण्+लृ		= 15×100000000
		= 1500000000
ख्षृ = (ख्+ष्) ऋ		= (2+80) 1000000
		= 82000000
ङिशिबुण्लृख्षृ		1582237500

आर्यभट की इस अक्षरांक-पद्धति के व्यवहार में कई दिक्कतें थीं। संख्याओं को व्यक्त करनेवाले आर्यभटीय के कुछ शब्दों के तो उच्चारण कर पाना भी संभव नहीं है! इसलिए बाद के गणितज्ञ- ज्योतिषियों ने आर्यभट की इस अक्षरांक-पद्धति को नहीं अपनाया।

24. श्लोक है—

चतुरधिक शतमष्टगुणं द्वाषष्टिस्तथा सहस्राणाम्।
अयुतद्वयविष्कम्भस्यासन्नो वृत्तपरिणाहः ।। 10।।

अर्थात्, (4+100) 8+62000=62832 उस वृत्त की परिधि का आसन्न मान है जिसका व्यास 20000 है।

अन्य शब्दों में, $\frac{\text{परिधि}}{\text{व्यास}} = \frac{62832}{20000} = 3.1416$

आर्यभट यह भी स्पष्ट करते हैं कि यह एक **आसन्न** यानी सन्निकट मान है।

25 समीकरण क**य** – ख **र** = ग, जहाँ अज्ञात राशियाँ य और र धन पूर्णांक हैं और क, ख तथा ग प्रदत्त पूर्णांक हैं, प्राचीन भारत में **कुट्टक** के नाम से जाना जाता था। कुट्टक का शाब्दिक अर्थ है—बार-बार कूटना। आर्यभट ने बार-बार भाग देकर इस समीकरण का हल प्राप्त किया है। इस तरह

के समीकरण (कुट्टक अथवा अनिर्धार्य) को जन्म देनेवाला, उदाहरण के लिए, एक सवाल है

वह कौन-सी संख्या है जिसमें 7509 से भाग देने से 13 शेष आता है और 5301 से भाग देने से 25 शेष आता है ?

तब समीकरण बनता है .

7509 य – 5301 र = 12

ऐसे समीकरण का हल प्रस्तुत करनेवाले आर्यभट पहले भारतीय गणितज्ञ थे ।

26. श्लोक है–

सदसज्ज्ञानसमुद्रात् समुद्धृतं देवताप्रसादेन ।
सज्ज्ञानोत्तमरत्नं मया निमग्नं स्वमतिनावा ।। 49 ।।

–गोलपाद, आर्यभटीय

27. आर्यभट के पहले के श्रुति-स्मृति ग्रंथों में निम्न काल-विभाजन देखने को मिलता है :

1 कल्प = 14 मनु
1 मनु = 71 युग
1 युग = 4320000 वर्ष

और, एक कल्प को ब्रह्मा का एक दिन, दो कल्प को ब्रह्मा का एक अहोरात्र, 720 कल्पों को ब्रह्मा का एक वर्ष और ऐसे 100 वर्षों को ब्रह्मा का जीवनकाल माना गया है ।

आर्यभट ने इस कृत्रिम युग-पद्धति को अस्वीकार करके एक नई सरल एवं वैज्ञानिक युग-पद्धति को जन्म दिया । **दशगीतिका** के तीसरे श्लोक के अनुसार–

1 कल्प = 14 मनु या 1008 युग
1 मनु = 72 युग

1 युग = 4320000 वर्ष

आर्यभट ब्रह्मा की आयु की कोई चर्चा नहीं करते। साथ ही, आर्यभट युग (महायुग) को चार समान भागों (युगपादों) में विभक्त करते हैं। तब प्रत्येक युगपाद 1080000 वर्षों का होता है।

28. आर्यभट कहते हैं-कालोऽयमनाद्यन्तः—काल अनादि-अनंत है। —*कालक्रियापाद*।। 11 ।।

29. श्लोक है—

वृत्तभपंजरमध्ये कक्ष्यापरिवेष्टितः खमध्यगतः।
मृज्जलशिखिवायुमयो भूगोलः सर्वतो वृत्तः ।। 6 ।।
—*गोलपाद, आर्यभटीय।*

अर्थात्, वृत्ताकार नक्षत्रमंडल के मध्य में, ग्रहों की कक्षाओं से परिवेष्टित आकाश के मध्य में पृथ्वी का गोला स्थित है। यह चारों ओर से गेंद की भाँति गोल है। यह मिट्टी, जल, वायु और अग्नि से निर्मित है।

आर्यभट यहाँ यह भी स्पष्ट करते हैं कि पृथ्वी खमध्य में स्थित है, यानी निराधार है।

30. आर्यभट नाम के एक और ज्योतिषी हुए। उनका समय ईसा की दसवीं सदी का मध्यकाल है। उनका **महा-सिद्धांत** नामक ग्रंथ उपलब्ध है। ग्रंथ में 18 अध्याय हैं। एक अध्याय **कुट्टक** के बारे में भी है। मगर ये दूसरे आर्यभट परंपरागत विचारों के समर्थक थे। उनके विचारों में कोई नवीनता नहीं है।

31. **आर्यभटीय** पर पहली टीका आचार्य प्रभाकर ने लिखी थी, परंतु वह आज उपलब्ध नहीं है। प्रभाकर संभवतः आर्यभट के शिष्य थे। फिर भास्कर-प्रथम ने सौराष्ट्र के वलभी नगर

में 629 ई. में आर्यभटीय पर टीका लिखी। यह उपलब्ध है, किंतु कुछ अधूरी। इसी को आधार बनाकर बाद में सोमेश्वर (लगभग 1040 ई.) ने टीका लिखी।

इनके अलावा, आर्यभटीय पर सूर्यदेव (जन्म 1191 ई.), परमेश्वर (1360-1455 ई.), नीलकंठ (जन्म 1443 ई.) आदि की टीकाएँ मिलती हैं। मलयालम और तेलुगू में भी आर्यभटीय की टीकाएँ मिलती हैं।

पता चलता है कि 800 ई. के आसपास आर्यभटीय का **जीज अल् अर्जबहर** के नाम से अरबी में अनुवाद हुआ था।

पठनीय ग्रंथ

1. आर्यभटीय (मूल सस्कृत और हिंदी अनुवाद)—रामनिवास राय
2. आर्यभटीय (मूल और अंग्रेजी अनुवाद)—कृपाशंकर शुक्ल तथा के. वी. शर्मा
3. आर्यभटीय (भास्कर-प्रथम और सोमेश्वर की टीका सहित) —कृपाशकर शुक्ल
4. आर्यभटीय (सूर्यदेव यज्वन् की टीका) संपादक के. वी. शर्मा [उपर्युक्त चारो ग्रंथ भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान एकादमी (नई दिल्ली) ने प्रकाशित किए हैं ।]
5. आर्यभटीयम् व्याख्याकार—बलदेव मिश्र
6. आर्यभट (अंग्रेजी) के. एन. मेनन
7. हिंदू गणितशास्त्र का इतिहास, भाग-1 : दत्त और सिंह अनु. कृपाशंकर शुक्ल
8. भारतीय ज्योतिष—शंकर बालकृष्ण दीक्षित
9. भारतीय विज्ञान की कहानी—गुणाकर मुले
10. भारतीय अंक-पद्धति की कहानी—गुणाकर मुले
11. हिस्ट्री आफ हिंदू मैथेमैटिक्स—विभूतिभूषण दत्त और अवधेश नारायण सिंह
12. द हिस्ट्री आफ एंशियंट इंडियन मैथेमैटिक्स—सी.एन. श्रीनिवासैयंगार
13. ए कंसाइज हिस्ट्री आफ सायस इन इंडिया—बोस, सेन और सुब्बरायप्पा
14. भारतीय ज्योतिष का इतिहास—गोरख प्रसाद
15. प्राचीन भारत के महान वैज्ञानिक—गुणाकर मुले

भारतीय गणित-ज्योतिष से संबंधित प्रमुख तिथियाँ

वेदांग-ज्योतिष (लगध)	लगभग 800 ई. पू.
शुल्व-सूत्र	लगभग 800 ई. पू.
सौर, वाशिष्ठ, पैतामह, रोमक और पौलिश सिद्धांत	ईसा की आरंभिक सदियों मे
आर्यभट का जन्म	476 ई.
आर्यभटीय की रचना	499 ई.
वराहमिहिर कृत **पंचसिद्धांतिका**	505 ई.
ब्रह्मगुप्त का जन्म	598 ई.
ब्राह्मस्फुट-सिद्धांत की रचना	628 ई.
भास्कर-प्रथम	लगभग 600 ई.
महावीराचार्य (**गणितसार-संग्रह**)	लगभग 850 ई
आर्यभट-द्वितीय (**महासिद्धांत**)	दसवीं सदी ई.
भास्कराचार्य का जन्म	1114 ई.
सिद्धांत-शिरोमणि की रचना	1150 ई.
सवाई जयसिंह (द्वितीय)	1686-1743 ई.